DPHCN-06

जन स्वास्थ्य एवं सामुदायिक पोषण

जन स्वास्थ्य

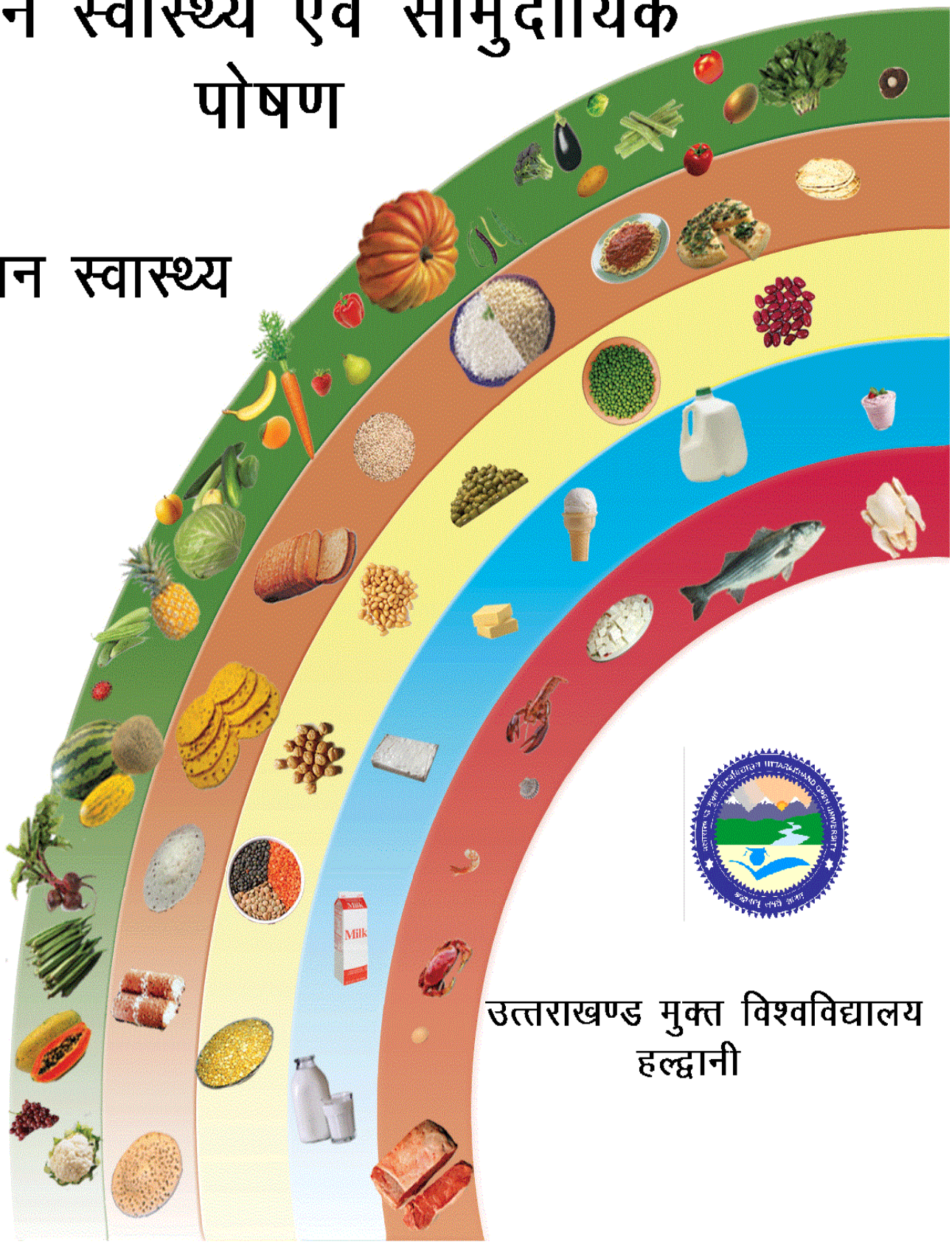

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
हल्द्वानी

जन स्वास्थ्य एवं सामुदायिक पोषण

Diploma in Public Health and Community Nutrition

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

तीनपानी बाई पास रोड, ट्रांसपोर्ट नगर के पास, हल्द्वानी-263139

फोन नं. 05946- 261122, 261123

टोल फ्री नं. 18001804025

फैक्स नं. 05946-264232, ई-मेल: info@uou.ac.in

http://uou.ac.in

विशेषज्ञ समिति

प्रो0 विनय कुमार पाठक
कुलपति
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
हल्द्वानी, नैनीताल

प्रो0 एन0 पी0 सिंह
निदेशक, स्वास्थ्य विज्ञान विद्याशाखा
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0 रीता रघुवंशी
अधिष्ठात्री, गृह विज्ञान महाविद्यालय
गो0ब0प0कृ0 एवं प्रौ0वि0वि0
पन्तनगर विश्वविद्यालय

डा0 जी0 एस0 चौहान
पूर्व प्रो0 एवं विभागाध्यक्ष
गो0ब0प0कृ0 एवं प्रौ0वि0वि0
पन्तनगर विश्वविद्यालय

डॉ0 सरिता श्रीवास्तवा
प्रो0 खाद्य एवं पोषण विभाग
गृह विज्ञान महाविद्यालय
गो0ब0प0कृ0 एवं प्रौ0वि0वि0
पन्तनगर विश्वविद्यालय

कार्यक्रम समन्वयक — डॉ0 प्रीति बोरा एवं श्रीमती मोनिका द्विवेदी

इकाई लेखन	इकाई संख्या
डॉ0 प्रीति बोरा , अकादमिक परामर्शदाता उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी	1,2
सुश्री सृष्टि ,पूर्व अकादमिक परामर्शदाता उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय , हल्द्वानी	3,4

पाठ्यक्रम सम्पादन

प्रो0 लीना भट्टाचार्या, वरिष्ठ अकादमिक परामर्शदाता
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल

चित्रांकन — डॉ0 प्रीति बोरा

कुलसचिव, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय की ओर से मुद्रित एवं प्रकाशित।

समस्त लेखों/पाठों से सम्बन्धित किसी भी विवाद के लिए लेखक जिम्मेदार होगा। किसी भी विवाद के लिए जूरिसडिक्शन हल्द्वानी (नैनीताल) होगा।

कॉपीराइट: उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय — प्रकाशन वर्ष: 201**6**

संस्करण: सीमित वितरण हेतु पूर्व प्रकाशन प्रति

प्रकाशक: एम0पी0डी0डी0, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी- 263139 (नैनीताल)

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

जन स्वास्थ्य

DPHCN-06

इकाई	पृष्ठ संख्या
इकाई 1 : सामुदायिक स्वास्थ्य की व्यापकता एवं भारत में सामुदायिक स्वास्थ्य समस्याएँ	1-10
इकाई 2: सामुदायिक स्वास्थ्य समस्याएँ एवं रोगों के कारण प्रसार और बचाव	11-42
इकाई 3: खाद्य एवं पोषण सुरक्षा	43-57
इकाई 4: सामुदायिक स्वास्थ्य के लिए पोषण सम्बन्धी कारक	58-77

इकाई 1: सामुदायिक स्वास्थ्य की व्यापकता एवं भारत में सामुदायिक स्वास्थ्य समस्याएं

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 सार्वजनिक स्वास्थ्यः एक परिचय
1.4 सार्वजनिक स्वास्थ्य के कार्य
1.5 भारत में सार्वजनिक स्वास्थ्य की महत्ता
1.6 समकालीन स्वास्थ्य मुद्दे
1.7 सार्वजनिक स्वास्थ्य हेतु राष्ट्रीय स्तर पर संगठनात्मक प्रयास
1.8 भारत में सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्याएँ
1.8.1 भारत में स्वास्थ्य की स्थिति
1.9 स्वास्थ्य पर शिक्षा के प्रभाव का बुनियादी वैचारिक मॉडल
1.10 सारांश
1.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची
1.13 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

सार्वजनिक स्वास्थ्य को कई प्रकार से परिभाषित किया जाता है। कई परिभाषाएँ सार्वजनिक स्वास्थ्य के व्यापक विस्तार तथा इस तथ्य को रेखांकित करती हैं कि यह एकल व्यक्तियों की अपेक्षा समग्र रूप से समाज के प्रयासों का परिणाम हैं। इसके अतिरिक्त कुछ परिभाषाएँ लक्ष्य महत्ता तथा जनता के हित पर जोर देती हैं। इन परिभाषाओं का मुख्य केन्द्र समाज का भौतिक, जैविक, मानसिक तथा आर्थिक विकास होता है। इस इकाई के अध्ययन के बाद आपको सार्वजनिक स्वास्थ्य की गहन जानकारी प्राप्त होगी तथा आप प्रमुख सार्वजनिक स्वास्थ्य मुद्दों पर विचार कर सकेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात शिक्षार्थी;

- सार्वजनिक स्वास्थ्य के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त कर सकेंगे;

- सार्वजनिक स्वास्थ्य के कार्यों की रूपरेखा का अध्ययन करेंगे; तथा
- समकालीन स्वास्थ्य मुद्दे तथा राष्ट्रीय स्तर पर संगठनात्मक प्रयासों के बारे में जानेंगे।

1.3 सार्वजनिक स्वास्थ्य: एक परिचय

एक बड़े पैमाने पर सार्वजनिक स्वास्थ्य उपलब्ध कराने हेतु सार्वजनिक स्वास्थ्य गतिविधियों के विभिन्न क्षेत्रों को आवरित करना आवश्यक है। जैसे,

- रोगों का प्रकोप
- सार्वजनिक स्वास्थ्य की आपात स्थितियां
- स्वास्थ्य प्रतिष्ठान तथा सभी स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान करने की सुविधा
- सुरक्षित पीने के पानी की सुविधा
- पर्यावरणीय स्वच्छता
- अपशिष्ट प्रबन्धन तथा सुरक्षित निस्तारण
- सार्वजनिक स्थानों में स्वच्छता तथा सुरक्षा
- व्यवसायिक सुरक्षा तथा औद्योगिक स्वच्छता
- सभी विकास परियोजनाओं का स्वास्थ्य प्रभाव आकलन
- जीवनशैली से संबंधित रोग, मानसिक बीमारियां, व्यापक रूप में प्रचलित रोग, सार्वजनिक स्वास्थ्य संबंधित कारक जैसे, तम्बाकू, शराब तथा अन्य मादक द्रव्यों का सेवन, स्वस्थ जीवनशैली को बढ़ावा देना, संतुलित आहार, नियमित व्यायाम, भोजन और पानी की सुरक्षा जिसके अंतर्गत वस्तु की पैकेजिंग, लेबलिंग, विज्ञापन, बिक्री तथा उपभोक्ता विनियमन विज्ञापन तथा कराधान और आबकारी नीतियाँ सम्मिलित हैं।
- सड़क तथा परिवहन सुरक्षा
- विशेष जनसमूह हेतु जन स्वास्थ्य उपाय

अर्थात् वर्तमान स्वरूप में सार्वजनिक स्वास्थ्य कई विषयों का एक समायोजन है। जैसे महामारी विज्ञान, जैविक आंकड़े, प्रयोगशाला विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, जनसांख्यिकी आदि तथा जन स्वास्थ्य के वितरण में कई श्रेणियों के विविध कौशल युक्त पेशेवर सम्मिलित हैं।

1.4 सार्वजनिक स्वास्थ्य के कार्य

जन समुदाय की भलाई हेतु सार्वजनिक स्वास्थ्य को एक विस्तृत श्रृंखला के कार्यों को पूर्ण करना आवश्यक है। जैसे,

- रोगों की रोकथाम हेतु समुचित उपाय करना

- अच्छे स्वास्थ्य की आदतें तथा स्वस्थ जीवनशैली को बढ़ावा देना
- सामुदायिक स्वास्थ्य की आवश्यकताओं की पहचान, उपाय, निगरानी तथा पूर्वानुमान
- आवश्यक स्वास्थ्य नीतियों को तैयार करना, बढ़ावा देना तथा लागू करना
- लागत प्रभावी तथा उच्च गुणवत्ता की सार्वजनिक स्वास्थ्य तथा स्वास्थ्य देखभाल सेवाओं को व्यवस्थित करना
- सभी के लिए स्वास्थ्य देखभाल सुनिश्चित कर असमानताओं को कम करना
- स्वस्थ्य वातावरण का निर्माण करना
- संपूर्ण जन समुदाय में अच्छे स्वास्थ्य संबंधित जानकारी देना
- प्राकृतिक तथा मानव निर्मित आपदाओं हेतु समुचित योजनात्मक तैयारी
- स्वास्थ्य को बढ़ावा देने तथा रोगों की रोकथाम की रणनीतियों का मूल्यांकन

रोगों तथा जोखिम कारकों की निगरानी के माध्यम से सार्वजनिक स्वास्थ्य सामुदायिक स्वास्थ्य आवश्यकताओं को पहचानने तथा उपयुक्त उपाय ढूंढने का कार्य करता है। इन प्रवृत्तियों का विश्लेषण तथा स्वास्थ्य सूचना प्रणाली का अस्तित्व सामुदायिक स्वास्थ्य आवश्यकताओं के लिए महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त करने हेतु आवश्यक है।

1.5 भारत में सार्वजनिक स्वास्थ्य की महत्ता

भारत में सार्वजनिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में कई कमियाँ हैं जो देश के संपूर्ण विकास में बाधा उत्पन्न कर सकती है। इसलिए इन उभरती हुई चुनौतियों का सामना करने के लिए हमें क्षमता निर्माण के प्रयासों का जल्दी क्रियान्वन करना होगा।

सार्वजनिक स्वास्थ्य का लक्ष्य स्वास्थ्य के अनेक निर्धारक कारकों पर ध्यान केन्द्रित करना है जैसे आर्थिक, सामाजिक, व्यवहारिक तथा जैविक। इसमें स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान करने हेतु उपयोग होने वाले प्रबन्धन तंत्र भी सम्मिलित हैं। यह तथ्य उल्लेखनीय है कि भारत में स्वास्थ्य क्षेत्र में तेजी से परिवर्तन आ रहे हैं परन्तु साथ ही देश संक्रामक रोगों, पोषण संबंधी विकारों, असुरक्षित गर्भधारण तथा गैर संक्रामक रोगों की महामारी को नष्ट करने की अधूरी कार्यसूचियों का भी सामना कर रहा है।

अतः देश के स्वास्थ्य तथा समस्त विकास के लिए एक ठोस जन स्वास्थ्य प्रतिक्रिया की आवश्यकता है जो लागत प्रभावी तथा सस्ती उपचारात्मक स्वास्थ्य देखभाल, रोग निवारण तथा स्वास्थ्य संवर्धन सेवाएं सुनिश्चित कर सकें। इसलिए हमें इस बात को सुनिश्चित करना होगा कि जन स्वास्थ्य हेतु शिक्षा तथा प्रशिक्षण की सामग्री बहु-अनुशासनिक होनी चाहिए। इस दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाने के लिए हमें बेहतर शोध कार्यक्रमों की भी आवश्यकता है जिससे बेहतर नीतियों का निर्माण हो सके तथा उनका भली-भांति क्रियान्वन हो सके।

उपरोक्त कथन से आपको यह स्पष्ट हो गया होगा कि सामुदायिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में शोध द्वारा बढ़िया नीतियों को विकसित किया जा सकता है।

वर्तमान स्वास्थ्य समस्याएं को पहचानने तथा उनके निवारण हेतु उचित रणनीतियों के विकास हेतु शोध कार्य अत्यंत आवश्यक है। प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में निरंतर हो रहे विकास के कारण यह आवश्यक है कि सार्वजनिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में भी नई तकनीकियों का उपयोग किया जाए जिससे सार्वजनिक स्वास्थ्य मुद्दों का समाधान करने हेतु अधिक परिष्कृत अनुसंधान रणनीति का उपयोग किया जा सके। सार्वजनिक स्वास्थ्य की गुणवत्ता, सभी स्तरों पर प्रशिक्षित तथा सक्षम कार्यबल की सतत उपलब्धता पर भी निर्भर करती है।

1.6 समकालीन स्वास्थ्य मुद्दे

सामुदायिक स्वास्थ्य की व्यापकता जन समुदाय की निवारणीय रोगों सम्बन्धी जानकारी पर निर्भर करती है। सभी बीमारियों को रोक पाना संभव नहीं परन्तु कुछ सामुदायिक बीमारियों को प्रभावी तरीके से कम करने या घटित होने को कम करने के तरीकों के बारे में जानकारी जन स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है। भारत में सामुदायिक स्वास्थ्य के सामने कई समस्याएं हैं जैसे, अपर्याप्त धन, सुविधाओं की कमी तथा प्रशिक्षित स्वास्थ्य कर्मियों की भारी कमी।

हालांकि विश्व स्तर पर सामुदायिक स्वास्थ्य के विचार से संक्रामक रोग एक प्रमुख चुनौती है परन्तु अपक्षयी तथा जीर्ण रोगों (degenerative and chronic diseases) का प्रतिशत भी उसी अनुपात में बढ़ रहा है जो अब गरीब देशों में भी पाया जा रहा है। आंकड़ों के अनुसार इक्कीसवीं सदी की शुरुआत में अपक्षयी तथा जीर्ण रोगों से होने वाली 74 प्रतिशत मृत्यु विकासशील देशों में हुई। इस जानकारी से यह साफ होता है कि विश्व की जनसंख्या का बहुमत विकासशील देशों में सीमित संसाधनों तथा आय के साथ रहता है। यद्यपि टीकों की सुविधाओं, सुधार व्यवस्था तथा जीवन के बेहतर मानकों के बावजूद अभी भी संक्रामक रोग दुनिया में 30 प्रतिशत से ज्यादा मृत्यु के प्रमुख कारण हैं।

परम्परागत रूप से सार्वजनिक स्वास्थ्य को मृत्यु दर के रूप में परिभाषित किया जाता था क्योंकि ये अपेक्षाकृत आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं। परन्तु मृत्यु दर का उपयोग उन रोगों हेतु किया जाता था जो अंततः मृत्यु का कारण बनते थे। इस तरह से वह रोग जो सिर्फ शरीर की क्रियाशीलता तथा जीवन की गुणवत्ता को प्रभावित करते थे, वह उपेक्षित रह जाते थे। अतः ये आवश्यक है कि सार्वजनिक स्वास्थ्य के आंकलन हेतु सभी पहलुओं पर विचार किया जाए।

विश्व में तकनीकी विकास के साथ सार्वजनिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में भी परिवर्तन आए। पूर्व में सार्वजनिक स्वास्थ्य संचारी रोगों तक सीमित था परन्तु अब इसमें गैर संचारी रोग भी सम्मिलित हैं, जैसे हृदय रोग, कैंसर इत्यादि। चिकित्सा प्रौद्योगिकी में नैदानिक तथा शल्य चिकित्सा क्षेत्र में तरक्की से इन रोगों का प्रबन्धन आसान हो गया है।

1.7 सार्वजनिक स्वास्थ्य हेतु राष्ट्रीय स्तर पर संगठनात्मक प्रयास

स्वास्थ्य नीतियों तथा कार्यक्रमों की रूपरेखा के निर्माण में केन्द्र सरकार महत्वपूर्ण कारक है। केन्द्र सरकार द्वारा कार्यक्रमों की योजना कुछ विशिष्ट मुद्दे जैसे मलेरिया उन्मूलन या परिवार नियोजन पर अधिक केन्द्रित है। केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय द्वारा धन का थोक आवंटन कुछ विशिष्ट कार्यक्रमों तथा श्रेणियों में बंधा है तथा राज्य स्तर पर स्थानीय प्राथमिकता के आधार पर धन आवंटन मुक्त नहीं है। परन्तु सार्वजनिक स्वास्थ्य नीतियों की समगत समीक्षा, उचित क्रियान्वन तथा संसाधनों के युक्तिसंगत उपयोग की गुंजाइश बहुत सीमित है।

1950 के पश्चात् भारत में सार्वजनिक स्वास्थ्य का इतिहास दिखाता है कि सेवाओं का संगठन सफल स्वास्थ्य अभियानों के लिए अनुकूल होता है। संगठित प्रयासों द्वारा किसी भी कार्य को एक बड़े पैमाने पर सफल बनाया जा सकता है। भविष्य में सार्वजनिक स्वास्थ्य पर अधिक ध्यान केन्द्रित करने की आवश्यकता है। निकट भविष्य में सार्वजनिक स्वास्थ्य को बड़े कार्यक्रमों द्वारा वित्तपोषित कर समृद्ध किया जा सकता है जैसे ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन, राष्ट्रीय स्वच्छता मिशन, राष्ट्रीय रोजगार गारंटी योजना आदि। यदि इन कार्यक्रमों को सृजनात्मक तरीके से लागू किया जाए तो सार्वजनिक स्वास्थ्य परिणामों में सुधार किया जा सकता है। इस दिशा में स्थानीय तथा राष्ट्रीय स्तर पर चलाए जा रहे संस्थान भी सशक्त भूमिका निभा सकते हैं।

पंचायती राज अधिनियम में स्थानीय सरकार के निर्माण तथा उनकी स्वास्थ्य गतिविधियों के विकास पर जोर दिया गया है, इस प्रकार अपेक्षित अंतर क्षेत्रीय समन्वय के साथ संस्थानों के निर्माण की आवश्यकता है जो सार्वजनिक स्वास्थ्य गतिविधियों का निचले स्तर से प्रबन्धन कर सकें।

राष्ट्रीय स्तर पर सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली के उचित क्रियान्वन हेतु बेहतर समन्वय तथा जानकारी की आवश्यकता है। केन्द्रीय एजेन्सियों द्वारा इस कार्य को बेहतर तरीके से किया जा सकता है। एक बड़े संघीय देश में इस प्रकार की केन्द्रीय एजेंसियाँ कई महत्वपूर्ण भूमिकाएं निभाती हैं जैसे आम प्रवृतियों की निगरानी, अनुसंधान तथा राज्यों को वित्तीय तथा तकनीकी सहायता।

सार्वजनिक स्वास्थ्य की उपेक्षा देश की अर्थव्यवस्था तथा नागरिकों के स्वास्थ्य पर प्रभाव डालती है। इसलिए सार्वजनिक स्वास्थ्य को देश के विकास के बुनियादी ढांचे का महत्वपूर्ण हिस्सा बनाना अति आवश्यक है।

1.8 भारत में सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्याएँ

विकसित देशों तथा पूर्वी एशिया में, व्यवस्थित सार्वजनिक स्वास्थ्य की दिशा में समुचित प्रयासों द्वारा श्रम उत्पादकता तथा मूल रूप से अच्छा स्वास्थ्य सिर्फ रोग की अनुपस्थिति नहीं है। अपितु ये अच्छे स्वास्थ्य में सम्मिलित हैं।

किसी भी समाज में उस समाज के लोगों का स्वास्थ्य उसकी सबसे बड़ी पूंजी है। सार्वजनिक स्वास्थ्य के अन्तर्गत लोगों की आर्थिक असामानताओं की समझ, स्वास्थ्य सेवाओं की गुणवत्ता, लागत, देखभाल तथा पहुँच भी शामिल है।

1.8.1 भारत में स्वास्थ्य की स्थिति

स्वतंत्रता के पश्चात् अपनी विकासशील चिकित्सा शिक्षा व्यवस्था तथा निजी चिकित्सा सुविधाओं के कारण भारत चिकित्सकीय उन्नति में विश्व में अपनी एक अलग पहचान रखता है। भारत अब स्वास्थ्य सेवाओं का एक प्रमुख प्रदाता है तथा दुनिया के सबसे उच्च, कुशल तथा योग्य चिकित्सा प्रदाताओं में से एक है।

हालांकि उपयुक्त स्वास्थ्य देखभाल अभी भी कई अविकसित क्षेत्रों में पहुँच से बाहर है। यहाँ तक जब चिकित्सीय उपचार उपलब्ध भी है तब भी सरकारी अस्पतालों में अक्सर कर्मचारियों तथा सुविधाओं की भारी कमी देखने को मिलती है। भारत में गरीबी स्वास्थ्य की स्थिति का एक प्रबल संकेतक है। कुछ और भी प्रमुख आँकड़े हैं जो इस स्थिति को स्पष्ट करते हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ के मानव विकास सूचकांक में 177 देशों मे भारत का 126 वां स्थान है। यह सूचकांक देशों को उनकी जनसंख्या को स्वास्थ्य तथा शिक्षा सुनिश्चित कराने के आधार पर वर्गीकृत है। विश्व के किसी भी देश की अपेक्षा भारत में सर्वाधिक जनसंख्या अशिक्षित है। हम भारत में सार्वजनिक शिक्षा के विस्तार स्वास्थ्य, जल और स्वच्छता की गुणवत्ता में विस्तार तथा सुधार के बिना गरीबी उन्मूलन नहीं कर सकते।

सार्वजनिक स्वास्थ्य की दृष्टि से कुछ महत्वपूर्ण मुद्दे चिंता करने का विषय बन गए हैं, जैसे मातृ मृत्यु दर, शिशु मृत्यु दर, रक्ताल्पता, कुपोषण आदि। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर 20 प्रतिशत से अधिक मातृ एवं शिशु मौतें भारत में हुई हैं।

भारत में सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्याओं को दो प्रमुख श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है। पहली श्रेणी में उन मुद्दों को सम्मिलित किया गया है जो परोक्ष रूप से स्वास्थ्य से संबंधित हैं-

- पर्यावरण
- शिक्षा
- सशक्तिकरण

पर्यावरणीय कारक सकारात्मक तथा नकारात्मक दोनों तरीकों से मानव स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं। सकारात्मक कारक अच्छे स्वास्थ्य को बनाए रखने तथा बहुल्य देने में मदद करते हैं। इनमें कई कारक शामिल हैं जैसे-

- पोषण के स्रोत (खेती: मिट्टी की गुणवत्ता, जल की उपलब्धता, जैव विविधता, अनुवांशिक रूप से संशोधित भोजन, वन्य जीवन)
- पीने, खाना पकाने हेतु स्वच्छ पानी तथा सफाई, स्वच्छ वायु
- ओजोन परत (पराबैंगनी किरणों तथा कैंसर आदि से सुरक्षा हेतु)
- स्वच्छता, अपशिष्ट का पुनर्चक्रण (Recycling) तथा निपटान (Disposal)

नकारात्मक पर्यावरणीय कारक सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए बड़ा खतरा बन सकते हैं। इसमें कई कारक जैसे सूक्ष्म जीवों वायरस, बैक्टीरिया द्वारा संक्रमण, पर्यावरणीय व्यवधान जैसे बाढ़, सूखा, ज्वालामुखी, भूकंप द्वारा नुकसान, प्रदूषण (वायु, जल, ध्वनि आदि) जो कई प्रकार की बीमारियों जैसे कैंसर, श्वास रोग आदि के लिए उत्तरदायी है।

सार्वजनिक स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में शिक्षा का भी महत्वपूर्ण योगदान है। प्रायः यह देखा गया है कि अधिक समय तक स्कूली शिक्षा बेहतर स्वास्थ्य तथा व्यवहार में मदद करती है। अच्छी शिक्षा एक अच्छे स्वास्थ्य में कई तरीके से लाभदायक सिद्ध होती है जैसे एक बेहतर जीवनशैली के निर्माण में, सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करने में, आय के बेहतर स्रोतों की उपलब्धता में, सम्पूर्ण मानव विकास में, व्यक्तिगत तथा सामुदायिक संबंधों के विकास में तथा सामुदायिक पोषण में। परन्तु शिक्षा द्वारा अच्छे स्वास्थ्य की अपेक्षा आय तथा अच्छी आर्थिक स्थिति जैसे अन्य कारकों के अभाव में नहीं की जा सकती है।

1.9 स्वास्थ्य पर शिक्षा के प्रभाव का बुनियादी वैचारिक मॉडल

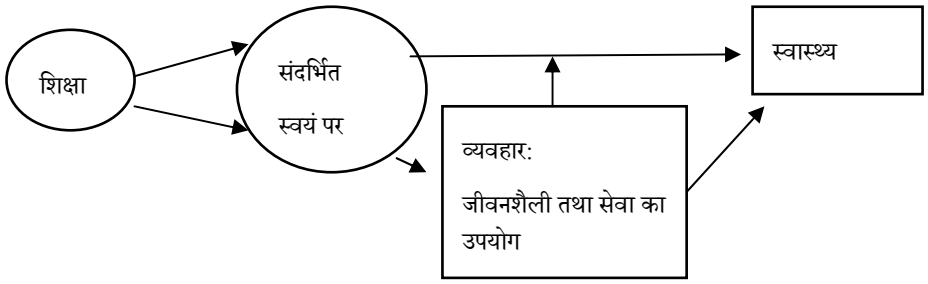

विश्व भर में स्वास्थ्य असमानताएं तेजी से बढ़ रही हैं। गंभीर कुपोषण, पानी और रक्त जनित संक्रामक रोग, पर्यावरण का शोषण तथा स्वास्थ्य सुविधाओं का अनुचित तथा असमान वितरण बढ़ने से सार्वजनिक स्वास्थ्य में महत्वपूर्ण प्रत्यक्ष बदलाव नहीं आ पाए हैं।

जहाँ तक सशक्तिकरण की बात है यह काफी हद तक हमारे आसपास के वातावरण पर निर्भर करता है। किसी भी तंत्र की सशक्तिकरण नीतियों की सफलता उस तंत्र में शामिल लोगों तथा

उनकी नेतृत्व क्षमताओं पर निर्भर करती है। सामुदायिक स्वास्थ्य के विकास हेतु कई बिन्दुओं पर ध्यान देना अति आवश्यक है। जैसे-

स्वास्थ्य संवर्धन रणनीतियों में निम्नलिखित सशक्तिकरण रणनीतियों को एकीकृत करना आवश्यक हैः

- छोटे सामूहिक प्रयासों को सहायक वातावरण तथा सामुदायिक भावना के लिए उपयोग करना।
- नागरिकों में कौशल, सूचना तथा संसाधनों के उपयोग में वृद्धि।
- नीतियों के क्रियान्वन, मूल्यांकन, नेतृत्व, प्रशिक्षण आदि में सामुदायिक भागीदारी को बढ़ावा देना।
- संगठनात्मक तथा अंतर संगठनात्मक कार्यो के माध्यम से सार्वजनिक स्वास्थ्य नीतियों को मजबूत बनाना।
- समुदाय में प्रतिभागियों को निर्णय लेने के अधिकार का हस्तांतरण।
- सरकार तथा अन्य संस्थाओं की कार्यप्रणाली में पारदर्शिता तथा उनकी सामुदायिक स्वास्थ्य के प्रति संवेदनशीलता।

दूसरी श्रेणी में वह मुद्दे आते हैं जो स्वास्थ्य को सीधे तौर पर प्रभावित करते हैं। इस श्रेणी के अंतर्गत तीन उपश्रेणियां आती हैं-

- रोग- इस उपश्रेणी के अंतर्गत संचारी, गैर संचारी तथा नए उभरते हुए रोग सम्मिलित हैं।
- प्रजनन क्षमता- यह उपश्रेणी देश की आबादी तथा विकास दर को प्रभावित करती है।
- पोषण संबंधी समस्याएं- इसके अंतर्गत कुपोषण संबंधित रोग जैसे प्रोटीन उर्जा कुपोषण, रक्ताल्पता तथा मोटापा आदि आते हैं।

अभ्यास प्रश्न 1

1. निम्नलिखित कथनों में सही अथवा गलत बताइए। गलत वाक्यों को सही कीजिए।
   a. सार्वजनिक स्वास्थ्य उपलब्ध कराने हेतु सार्वजनिक स्वास्थ्य गतिविधियों के विभिन्न क्षेत्रों को आवरित करना आवश्यक है। (सही/गलत)
   b. सामुदायिक स्वास्थ्य की व्यापकता जन समुदाय की निवारणीय रोगों सम्बन्धी जानकारी पर निर्भर करती है। (सही/गलत)
2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।
   a. आंकड़ों के अनुसार इक्कीसवीं सदी की शुरूआत में अपक्षयी तथा जीर्ण रोगों से होने वाली..... प्रतिशत मृत्यु विकासशील देशों में हुई।
   b. संयुक्त राष्ट्र संघ के मानव विकास सूचकांक में 177 देशों में भारत का ..... स्थान है।

c. पोषण के स्रोत सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्याओं के ..... कारक हैं।

1.10 सारांश

सार्वजनिक स्वास्थ्य रोगों की रोकथाम करने, जीवन प्रत्याशा बढ़ाने तथा समाज के संगठित प्रयासों के माध्यम से स्वास्थ्य को बढ़ावा देने की कला तथा विज्ञान है। सार्वजनिक स्वास्थ्य का मुख्य केन्द्र समाज का भौतिक, जैविक, मानसिक तथा आर्थिक विकास होता है। वर्तमान स्वरूप में सार्वजनिक स्वास्थ्य कई विषयों का एक समायोजन है। जैसे महामारी विज्ञान, जैविक आंकड़े, प्रयोगशाला विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, जनसांख्यिकी आदि। सामुदायिक स्वास्थ्य की व्यापकता जन समुदाय की निवारणीय रोगों सम्बन्धी जानकारी पर निर्भर करती है। पूर्व में सार्वजनिक स्वास्थ्य संचारी रोगों तक सीमित था परन्तु अब इसमें गैर संचारी रोग भी सम्मिलित हैं, जैसे हृदय रोग, कैंसर इत्यादि। चिकित्सा प्रौद्योगिकी में नैदानिक तथा शल्य चिकित्सा क्षेत्र में तरक्की से इन रोगों का प्रबन्धन आसान हो गया है। स्वतंत्रता के पश्चात् अपनी विकासशील चिकित्सा शिक्षा व्यवस्था तथा निजी चिकित्सा सुविधाओं के कारण भारत चिकित्सकीय उन्नति में विश्व में अपनी एक अलग पहचान रखता है। भारत अब स्वास्थ्य सेवाओं का एक प्रमुख प्रदाता है। सार्वजनिक स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में शिक्षा का भी महत्वपूर्ण योगदान है। अच्छी शिक्षा एक अच्छे स्वास्थ्य में कई तरीके से लाभदायक सिद्ध होती है जैसे एक बेहतर जीवनशैली के निर्माण में, सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करने में, आय के बेहतर स्रोतों की उपलब्धता में, सम्पूर्ण मानव विकास में, व्यक्तिगत तथा सामुदायिक संबंधों के विकास में तथा सामुदायिक पोषण में।

1.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1. सही/गलत
   a. सही
   b. सही
2. रिक्त स्थान भरिए
   a. 74
   b. 126 वां
   c. पर्यावरणीय सकारात्मक

1.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. कुमारी विमलेश (2000), सामुदायिक स्वास्थ्य, डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली

इंटर्नेट स्रोत:

1. www.fds.oup.com
2. www.indiatogether.org
3. www.centad.org

1.13 निबंधात्मक प्रश्न

1. सार्वजनिक स्वास्थ्य को परिभाषित कीजिए।
2. सार्वजनिक स्वास्थ्य की विस्तृत कार्य श्रृंखला को सूचीबद्ध कीजिए।
3. भारत में सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्याओं की प्रमुख श्रेणियों के बारे में विस्तारपूर्वक बताइए।
4. स्वास्थ्य संवर्धन की सशक्तिकरण रणनीतियों पर प्रकाश डालिए।
5. सार्वजनिक स्वास्थ्य हेतु राष्ट्रीय स्तर पर संगठनात्मक प्रयासों की व्याख्या कीजिए।

इकाई 2: सामुदायिक स्वास्थ्य समस्याएँ एवं रोगों के कारण, प्रसार और बचाव

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 संचारी, गैर संचारी तथा नए उभरते हुए रोग
2.3.1 मलेरिया
2.3.2 फाइलेरिया
2.3.3 काला-अजार
2.3.4 कुष्ठ रोग
2.3.5 तपेदिक
2.3.6 पोलियो
2.3.7 एड्स
2.3.8 प्रजनन तथा बाल स्वास्थ्य सुरक्षा
2.4 पोषण जनित रोग
2.4.1 प्रोटीन उर्जा कुपोषण
2.4.2 विटामिन 'ए' की कमी
2.4.3 रक्तालपता
2.4.4 आयोडीन अल्पता विकार
2.4.5 फ्लोरोसिस
2.4.6 मोटापा
2.4.7 हृदय रोग
2.4.8 मधुमेह
2.5 सारांश
2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.7 संदर्भ ग्रंथ सूची
2.8 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

सार्वजनिक स्वास्थ्य रोगों की रोकथाम करने, जीवन प्रत्याशा बढ़ाने तथा समाज के संगठित प्रयासों के माध्यम से स्वास्थ्य को बढ़ावा देने की कला तथा विज्ञान है। समाज के सभी सदस्यों का जैविक, भौतिक तथा मानसिक उत्थान ही सार्वजनिक स्वास्थ्य का प्रमुख लक्ष्य है। सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाएं धारणात्मक रूप से चिकित्सकीय सेवाओं से भिन्न हैं। इनके लक्ष्य रोगों के उपचार की अपेक्षा जनसंख्या का रोगों से बचाव पर अधिक केन्द्रित होते हैं। लक्ष्य पूर्ति विभिन्न माध्यमों से की जाती है जैसे समाज हेतु पर्याप्त भोजन आपूर्ति, पानी की व्यवस्था, अपशिष्ट निस्तारण की सुविधा, स्वास्थ्य शिक्षा तथा बेहतर सार्वजनिक स्वास्थ्य परिणाम हेतु शिक्षित समाज का निर्माण। सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाएं आर्थिक विकास तथा गरीबी उन्मूलन द्वारा एक उन्नत समाज के निर्माण में मदद करती हैं। अपने विस्तृत तथा चुनौतिपूर्ण लक्ष्य प्राप्ति हेतु सार्वजनिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता प्रौद्योगिकी, सामाजिक विज्ञान, राजनीति आदि से संबंधित कार्यों की एक विस्तृत श्रृंखला में संलग्न हैं। इन कार्यों से वह भविष्य में होने वाली समस्याओं को पहचान सकते हैं तथा मौजूदा समस्याओं की पहचान कर इन्हें हल करने हेतु उचित रणनीति का उपयोग कर सकते हैं।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात शिक्षार्थी;

- सार्वजनिक स्वास्थ्य रोगों के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त कर सकेंगे;
- राष्ट्रीय रोगरोधी कार्यक्रमों के बारे में जान पायेंगे; तथा
- सामुदायिक स्तर पर सार्वजनिक स्वास्थ्य रोगों के विभिन्न प्रभावों को समझ पायेंगे।

आप पूर्व में यह पढ़ चुके हैं कि भारत में सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्याओं को दो प्रमुख श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है।

पहली श्रेणी में उन मुद्दों को सम्मिलित किया गया है जो परोक्ष रूप से स्वास्थ्य से संबंधित हैं:

- पर्यावरण
- शिक्षा
- सशक्तिकरण

दूसरी श्रेणी में वह मुद्दे आते हैं जो स्वास्थ्य को सीधे तौर पर प्रभावित करते हैं। इस श्रेणी के अंतर्गत तीन उपश्रेणियां आती हैं-

- रोग- इस उपश्रेणी के अंतर्गत संचारी, गैर संचारी तथा नए उभरते हुए रोग सम्मिलित हैं।
- प्रजनन क्षमता- यह उपश्रेणी देश की आबादी तथा विकास दर को प्रभावित करती है।
- पोषण संबंधी समस्याएँ- इसके अंतर्गत कुपोषण संबंधित रोग जैसे प्रोटीन उर्जा कुपोषण, रक्ताल्पता तथा मोटापा आदि आते हैं।

भारत में सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्याओं की इन्हीं तीन श्रेणियों के अंतर्गत अध्ययन किया जाता है।

2.3 संचारी, गैर-संचारी तथा नए उभरते हुए रोग

निम्न बताए गए रोगों का प्रबंधन भारत में राष्ट्रीय वेक्टर जनित रोग नियंत्रण कार्यक्रम तथा राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन से संबंधित है।

संचारी, गैर संचारी तथा नए उभरती हुई सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्याओं में निम्नलिखित समस्याएँ प्रमुख हैं-

2.3.1 मलेरिया

मानव जाति को प्रभावित करने वाले प्रमुख संचारी रोगों में मलेरिया प्रमुख है। यह प्लाज्मोडियम (Plasmodium) परजीवी के कारण होता है तथा मादा एनीफेलीज (Anipheles) मच्छर के काटने से संक्रमित होता है।

वर्तमान आंकड़े बताते हैं कि विश्वभर में मलेरिया 3000-5000 लाख नैदानिक मामले हैं तथा प्रति वर्ष 15-27 लाख लोगों की मृत्यु मलेरिया के कारण होती है। दुनिया के 100 से ज्यादा देशों में मलेरिया सार्वजनिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में एक प्रमुख चुनौती है।

संवेदनशील क्षेत्रों में सैन्य संघर्षों, युद्धों तथा पर्यावरणीय प्रतिकूल परिवर्तनों ने मलेरिया को महामारी बनाने में योगदान दिया है। भारत में वर्ष 2000 में मलेरिया के लगभग 1.1 लाख सकारात्मक मामले पाए जाते हैं। भारत में मलेरिया की अवस्था पर प्रति व्यक्ति व्यय लगभग 7.18 रूपये प्रति वर्ष है इसलिए मलेरिया के कारण वार्षिक आर्थिक नुकसान एक सोचनीय विषय है।

भारत में राष्ट्रीय मलेरिया रोधी कार्यक्रम

स्वतंत्रता पूर्व वर्ष 1953 में राष्ट्रीय मलेरिया रोधी कार्यक्रम के शुभारंभ के पहले भारत में प्रतिवर्ष 8 लाख लगभग मौतों का कारण मलेरिया था। वर्ष 1946 में बोर (Bhore) समिति द्वारा एक देशव्यापी मलेरिया नियंत्रण कार्यक्रम का सुझाव रखा गया था जिसे वर्ष 1951 में योजना आयोग द्वारा समर्थन मिला था। मलेरिया के खिलाफ राष्ट्रीय कार्यक्रम का एक लंबा विशिष्ट इतिहास है।

अप्रैल, 1953 में भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय मलेरिया नियंत्रण कार्यक्रम (NMCP- National Malaria Control Programme) निम्नलिखित उद्देश्यों के साथ शुरू किया गया।

- मलेरिया संचरण (Transmission) को एक निचले स्तर पर लाना जिससे वह एक सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्या ना रहे।
- राष्ट्रीय स्तर पर इस स्थिति को बनाए रखा जाना।

NMCP की कई रणनीतियां थीं-

- मानव आवासों तथा पशु शेडों में नियंत्रित कीटनाशक छिड़काव।
- मलेरिया नियंत्रण टीमों का गठन जिनका कार्य सर्वेक्षण कर लक्षित क्षेत्रों की पहचान करना था।
- मरीजों को मलेरिया रोधी दवाएँ उपलब्ध कराना।

1977 में मलेरिया उन्मूलन प्रयासों को छोड़, समीक्षा नीति के तहत एक संशोधित योजना (MPO, Modified Planning Operation) अपनायी गई जिसके उद्देश्य निम्नलिखित थे:

- मलेरिया से होने वाली मृत्यु का पूर्ण उन्मूलन
- मलेरिया रुग्णता (Morbidity) में न्यूनीकरण
- मलेरिया के संचरण को कम करने में अब तक प्राप्त लाभों का अनुरक्षण

सरकार द्वारा किए जा रहे प्रयासों के साथ समुदाय में रहने वाले लोगों के लिए मलेरिया रोकथाम हेतु सरल तथा लागत प्रभावी तरीके भी अपनाए जा सकते हैं-

- जिन क्षेत्रों में मलेरिया होने की संभावना ज्यादा रहती हो वहाँ पर लोगों को रात में कीटनाशक प्रयुक्त जालों का प्रयोग करना चाहिए क्योंकि आमतौर पर यह मच्छर रात में काटते हैं।
- अपने आस-पड़ोस के परिवेश में नियमित रूप से उपयुक्त कीटनाशकों का छिड़काव करना चाहिए।
- सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों में मलेरिया रोधी दवाएं उपलब्ध होनी चाहिए।

2.3.2 फाइलेरिया

भारत में फाइलेरिया एक प्रमुख सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्या है। देश में फाइलेरिया के नियंत्रण तथा बचाव के उपाय हेतु वर्ष 1955 में राष्ट्रीय फाइलेरिया नियंत्रण कार्यक्रम (NFCP, National Filaria Control Programme) शुरू किया गया था। वर्तमान में भारत में लगभग 23 लाख मामले रोगसूचक फाइलेरिया के हैं तथा 473 लाख व्यक्तियों में संक्रमण का संभावित खतरा है। फाइलेरिया देश के सामाजिक, आर्थिक विकास के लिए एक प्रमुख बाधा है।

फाइलेरिया (Filaria) एक परजीवी संक्रामक रोग है जो निमेटोड परजीवी (Nematode parasite) के कारण होता है। सामान्यतया आठ प्रकार के फाइलेरिया के परजीवी हैं जो अपने जीवन चक्र में मानव शरीर का उपयोग करते हैं। फाइलेरिया रोग को तीन श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है-

लसिका फाइलेरिया (Lymphatic Filariasis)

इस श्रेणी में कृमि शरीर की लसिका प्रणाली को प्रभावित करते हैं। लसिका फाइलेरिया के गंभीर मामलों को फीलपाँव (Elephantiasis) के रूप में जाना जाता है जिसमें त्वचा मोटी हो जाती है तथा अंतर्निहित ऊतकों में शोथ (oedema) के कारण असामान्य रूप से सूजन हो जाती है। अन्य लक्षणों में बुखार, वजन का घटना, सांस की परेशानी, खांसी आदि शामिल हैं।

उपचर्म फाइलेरिया (Subcutaneous Filariasis)

इस रोग में परजीवी त्वचा के नीचे की वसा की परत को प्रभावित करते हैं। यह रोग समान्यतया लक्षण रहित होता है परन्तु व्यस्क कृमि अथवा उनके चयापचयी उत्पादों द्वारा कुछ लक्षण उत्पन्न हो सकते हैं जैसे त्वचा में लालिमा, खुजली तथा गहरी परतों में सूजन, जो लम्बे समय तक रह सकती है। त्वचा में कृमि के संवेदनशील हिस्सों में पहुँचने पर तीव्र पीड़ा हो सकती है। उदाहरण के लिए आंख की सतह के पास।

उदर फाइलेरिया (Abdominal Filariasis)

इस रोग में परजीवी कृमि उदर की तरल कैविटी को प्रभावित कर उसे संक्रमित करते हैं। उपरोक्त तीनों प्रकार में यह रोग उन मक्खियों या मच्छरों द्वारा फैलता है जो खून चूसते हैं।

फाइलेरिया के रोगनिरोधी उपाय

भारत में फाइलेरिया रोग देश के दक्षिणी इलाकों मुख्यतः आन्ध्र प्रदेश में यह रोग बहुत देखने को मिलता है। आन्ध्र प्रदेश के 16 जिलों में इस रोग की बहुतायत है। वर्तमान में इस देश के फाइलेरिया निरोधी कार्यक्रम के अंतर्गत आन्ध्र प्रदेश में 29 रोग निरोधी इकाईयां, 4 फाइलेरिया क्लीनिक तथा 2 सर्वेक्षण इकाईयां गठित की गई हैं।

फाइलेरिया परिसीमित करने हेतु गठित फाइलेरिया नियंत्रण इकाईयों के उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

- रोग के संचरण (Transmission) को कम करने हेतु साप्ताहिक अंतराल पर रोग निरोधी उपायों का इस्तेमाल करना।

- सूक्ष्म फाइलेरिया वाहक का पता लगाने हेतु प्रत्येक वार्ड से रक्त के नमूने लेने हेतु सर्वेक्षण करना।
- रोगों के मामलों का उचित उपचार तथा प्रबन्धन।

सामुदायिक तथा घरेलू स्तर कई अन्य रोग निरोधी उपाय किए जा सकते हैं-

- मच्छरों के विनाश हेतु नियमित समय अंतराल पर कीटनाशक दवाओं का छिड़काव।
- संक्रमण की दर कम करने तथा मच्छरों के काटने से बचाव हेतु सोते समय जाल का उपयोग करना, मच्छर भगाने की दवाओं/कॉयल का इस्तेमाल करना तथा घर के आस-पास सफाई रखना।

2.3.3 काला-अजार

यह रोग एक घातक बीमारी है जो परजीवी प्रोटोजोआ Leishmania dovovari के कारण होती है तथा मच्छरों के काटने से संक्रमित होती है। भारतीय परिपेक्ष्य में इस रोग को काला बुखार के नाम से जाना जाता है जिसे वैज्ञानिक नाम (Visceral Leishmaniasis) दिया गया है। परजीवी का यह प्रकार शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को कम करता है। साथ में अन्य लक्षण भी दिखाई देते हैं जैसे लगातार बुखार आना, रक्ताल्पता आदि।

रोग की व्यापकता

संपूर्ण विश्व के लगभग 88 देशों के लगभग 5 लाख लोग इस रोग से पीड़ित हैं। भारत में इस रोग के लगभग 20,000 मामले प्रकाश में है तथा हर वर्ष लगभग 200 मौतें काला-अजार के कारण होती है। बिहार में सर्वाधिक 33 जिले इस रोग से प्रभावित हैं। इसके अलावा पश्चिम बंगाल, झारखंड तथा उत्तर प्रदेश के भी कई जिले इस बीमारी से प्रभावित हैं।

भारत में कालाजार के नियंत्रण के प्रयास

- भारत में वर्ष 1990-91 में एक संगठित केन्द्र प्रायोजित नियंत्रण कार्यक्रम शुरू किया गया था। सरकार द्वारा रोगनिरोधी दवाएं , कीटनाशक तथा तकनीकी सहायता नियमित रूप से स्वास्थ्य सेवाओं के माध्यम से उपलब्ध कराई जाती है।

कालाजार रोगनिरोधी कार्यक्रम की रणनीति के उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

- कीटनाशकों का नियमित छिड़काव
- प्रारंभिक निदान तथा संपूर्ण उचित उपचार

18 मई 2005 में विश्व स्वास्थ्य संगठन के तीन दक्षिण पूर्वी एशियाई सदस्य देशों (भारत, नेपाल तथा बांग्लादेश) द्वारा कालाजार के उन्मूलन हेतु एक सहमति अनुबंध पत्र पर हस्ताक्षर किए गए। इस अनुबंध के अनुसार कालाजार को संपूर्ण रूप से खत्म करना रोग निरोधी रणनीतियों का प्रमुख उद्देश्य है। प्रमुख रणनीतियां इस प्रकार हैं:

- रोग की उचित तथा प्रभावी तरीके से निगरानी करना

- कीटनाशक छिड़काव, जालों के प्रयोग तथा पर्यावरणीय प्रबन्धन द्वारा रोग पर प्रभावी नियंत्रण
- संवेदनशील जनसंख्या को संगठित कर संयुक्त सामाजिक प्रयास
- उन्मूलन कार्यक्रम के समर्थन हेतु चिकित्सकीय तथा संचालन अनुसंधान के प्रयास

उन्मूलन कार्यक्रम के अंतर्गत गरीब एवं कमजोर वर्ग के हितों का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए। रणनीतियों का क्रियान्वन विभिन्न प्रमुख चरणों में किया जाना चाहिए जैसे प्रारंभिक चरण, आक्रमण का चरण तथा अनुरक्षण चरण।

2.3.4 कुष्ठ रोग (Leprosy)

कुष्ठ रोग एक संक्रामक रोग है। कुष्ठ रोग एक जीवाणु के कारण होता है जो विशेष रूप से शरीर की नसों तथा त्वचा को प्रभावित करता है। कुष्ठ रोग के कारण शरीर में घाव, तंत्रिका क्षति तथा प्रगतिशील शारीरिक दुर्बलता देखी जाती है। बच्चों में इस रोग की संभावना वयस्कों से ज्यादा होती है।

कुष्ठ रोग की जटिलताएँ

कुष्ठ रोग के कारण निम्न स्थितियां उत्पन्न हो सकती हैं-

- त्वचा विकृति
- मांसपेशियों में कमजोरी
- तंत्रिका क्षति
- त्वचा की संवेदनशीलता में कमी

कुष्ठ रोग के लक्षण

कुष्ठ रोग में आमतौर पर बैक्टीरिया द्वारा संक्रमित होने से तीन से पांच साल बाद लक्षण उत्पन्न होते हैं। कुष्ठ रोग के लक्षणों में सम्मिलित हैं-

- आँख की समस्याएं
- मांसपेशियों में कमजोरी
- त्वचा में लालिमा तथा कठोरता
- त्वचा में सामान्य त्वचा रंग की तुलना में हल्के रंग के घाव उत्पन्न होना। इन घावों में स्पर्श, गर्मी अथवा दर्द के लिए संवेदनशीलता कम होती है।
- हाथों तथा पावों का सुन्न होना अथवा संवेदनशीलता की अनुपस्थिति।

कुष्ठ रोग की रोकथाम तथा उपचार

हालांकि कुष्ठ रोग का इलाज दवाओं द्वारा किया किया जा सकता है। एक प्रारंभिक शीघ्र निदान अकसर कुष्ठ रोग के लक्षण तथा जटिलताओं को कम करता है।

कुष्ठ रोग के उपचार में दवाओं के साथ सहायक देखभाल भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। लक्षणों तथा जटिलताओं के उपचार में देखभाल जरूरी है। रोग के लिए जिम्मेदार जीवाणु को मारने हेतु दवाओं का इस्तेमाल होता है जैसे Aspirin, Prednisone, Thalidomide आदि।

कुष्ठरोग की रोकथाम में कई बिंदु महत्वपूर्ण हैं-

- कुष्ठरोग के तत्काल संपर्क से बचना
- कुष्ठरोग का नियमित रूप से परीक्षण
- विकृति के पुनर्निमाण हेतु सर्जरी की सुविधा
- रोगियों तथा समुदाय में अन्य लोगों को इस रोग की जानकारी देना।

भारत में कुष्ठ रोग उन्मूलन कार्यक्रम

2002 में प्रस्तावित राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति द्वारा 2005 के अंत तक कुष्ठ रोग उन्मूलन का लक्ष्य निर्धारित किया गया था। राष्ट्रीय कुष्ठ रोग उन्मूलन कार्यक्रम द्वारा राज्य/केन्द्र शासित सरकारों तथा विश्व स्वास्थ्य संगठन तथा विश्व बैंक जैसे समर्पित भागीदारों के सहयोग के साथ इस कार्यक्रम के उद्देश्यों को प्राप्त करने का सफल प्रयास किया गया। सरकारी क्षेत्रों, गैर सरकारी संगठनों, भागीदारी संगठनों मे काम कर रहे स्वास्थ्य कर्मियों के योजनाबद्ध कार्यकलापों तथा सशक्त प्रयासों द्वारा दिसंबर 2005 के अंत तक देश ने कुष्ठ रोग उन्मूलन के लक्ष्य को प्राप्त किया।

राष्ट्रीय कुष्ठ रोग उन्मूलन कार्यक्रम की महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ

1955	भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय कुष्ठरोग नियंत्रण कार्यक्रम का शुभारंभ
1983	राष्ट्रीय कुष्ठरोग उन्मूलन कार्यक्रम की शुरूआत
1993-2000	विश्व बैंक द्वारा इस कार्यक्रम के पहले चरण को समर्थन
2001-2004	विश्व बैंक द्वारा इस कार्यक्रम के दूसरे चरण को समर्थन
2005 (जनवरी)	इस कार्यक्रम को सरकार तथा धनदाता भागीदारों के सहयोग से जारी रखा गया।
2005 (दिसंबर)	भारत में इस सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्या के उन्मूलन का उद्देश्य प्राप्त किया।

2.3.5 तपेदिक (टीबी)

तपेदिक भारत में एक प्रमुख सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्या है। संपूर्ण विश्व के कुल टीबी मामलों में 1/5th मामले भारत से हैं। एक अनुमान के अनुसार प्रतिवर्ष लगभग 3 लाख 30 हजार भारतीयों की टीबी के कारण मृत्यु हो जाती है।

तपेदिक एक घातक संक्रामक रोग है जो माइक्रोबैक्टीरियम ट्यूबरकुलौसिस (Mycobacterium tuberculosis) नामक बैक्टीरिया द्वारा होता है। टीबी में शरीर के कई भाग विशेषकर फेफड़े प्रभावित होते हैं। टीबी के जीवाणु हवा में टीबी संक्रमित रोगी के छींकने,

खांसने या थूकने से फैलते हैं। प्रारंभ में यह एक लक्षण रहित, अव्यक्त संक्रमण होता है जो विस्तृत होकर गंभीर रूप ले लेता है तथा अगर समय पर उपचार न किया जाए तो रोगी की मृत्यु भी हो सकती है।

रोग के लक्षण

जब रोग सक्रिय होता है, ऐसे 35% मामलों में फेफड़े प्राभवित होते हैं। इसमें कई लक्षण प्रमुख हैं जैसे सीने में दर्द, खांसने पर खून का आना, लम्बे समय तक बुखार, खांसी आदि। अन्य लक्षण हैं ठंड लगना, पसीना आना, भूख न लगना, वजन का घटना, त्वचा में पीलापन, थकान रहना आदि।

रोकथाम तथा नियंत्रण

टीबी की रोकथाम तथा नियंत्रण के दो समानांतर पहलू हैं- पहला टीबी संक्रमित रोगियों की पहचान तथा उपचार; दूसरा बच्चों मे टीबी का टीकाकरण। इसमें उच्च जोखिम वाले समूहों में टीबी का परीक्षण भी अंतर्निहित है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा 1993 में टीबी को एक अन्तर्राष्ट्रीय स्वास्थ्य आपात स्थिति घोषित किया गया। 1993 से ही भारत सरकार द्वारा संशोधित राष्ट्रीय क्षयरोग नियंत्रण कार्यक्रम (RNTCP) के माध्यम से विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा अनुशासित DOTS (Directly Observed Treatment) रणनीति का प्रयोगिक परीक्षण किया गया। मार्च 2006 में इस कार्यक्रम को देशभर में 633 जिलों में लागू किया गया। 2006 से ही RNTCP, WHO की "टीबी खत्म करो" की रणनीति को अपना रहा है तथा टीबी से संबंधित नए मुद्दों तथा चुनौतियों पर काम कर रहा है।

RNTCP के निम्नलिखित उद्देश्य हैं-

- सकारात्मक (positive) फेफड़ों की टीबी के मामलों में कम से कम 85% उपचार दर प्राप्त करना तथा उसे बनाए रखना।

- उपरोक्त ऐसे मामलों में कम से कम 30% मामलों की सफलतापूर्वक पहचान करना।

RNTCP की संरचना के पाँच स्तर हैं-

राष्ट्रीय, राज्य, जिला, उपजिला तथा परिधीय स्वास्थ्य संस्थान। केन्द्रीय क्षयरोग विभाग जो स्वास्थ्य सेवा महानिदेशालय, स्वास्थ्य तथा परिवार कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार का हिस्सा है, राष्ट्रीय स्तर पर टीबी के नियंत्रण हेतु उत्तरदायी है जिसका नेतृत्व एक उप महानिदेशक (क्षयरोग) करता है:

इस कार्यक्रम के अंतर्गत अभी तक लगभग 10 लाख टीबी रोगियों का उपचार किया जा चुका है। वर्ष 2008 में इसके अंतर्गत 72% सकारात्मक मामलों का पता चला तथा 86% से अधिक मामलों में उपचार की सफलता दर हासिल की।

RNTCP के लागू होने के बाद टीबी से मरने वाले लोगों की संख्या में भारी कमी आई है। एक अनुमान के अनुसार इस कार्यक्रम द्वारा 17 लाख अतिरिक्त जानें बचाई गई।

RNTCP कार्यक्रम भारत सरकार द्वारा पोषित है। विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा भी इस कार्यक्रम को सहायता मिलती है। यह सहायता 90 क्षेत्र स्तरीय परामर्शदाताओं द्वारा दी गई तकनीकी सहायता के रूप में होती है जो जिला तथा राज्य टीबी अधिकारियों के साथ मिलकर काम करते हैं।

2.3.6 पोलियो

पोलियो एक ऐसा रोग है जो संक्रमित होने पर व्यक्ति को जीवन भर प्रभावित करता है। पोलियो विषाणु सार्वजनिक स्वास्थ्य की दृष्टि से विशेष चिंता का विषय है क्योंकि यह बड़ी आसानी से फैलता है। यह विषाणु कई हफ्तों तक बिना किसी लक्षण के प्रसारित होकर पोलियो मुक्त क्षेत्रों में प्रवेश कर सकते हैं। यह एक विषाणुज (Viral) रोग है जो तंत्रिकाओं को प्रभावित कर शरीर में आंशिक या पूर्ण रूप से पक्षाघात कर सकता है।

कारण तथा जोखिम कारक

जैसे आपने उपर पढ़ा कि यह एक विषाणु जनित रोग है। यह रोग Enterovirus genus के विषाणु द्वारा होता है जो पोलियो विषाणु के रूप में जाना जाता है। यह विषाणु एक से दूसरे व्यक्ति में सीधे संपर्क द्वारा, संक्रमित मल, कफ से संपर्क द्वारा फैलता है।

यह विषाणु मुंह तथा नाक के माध्यम से शरीर में प्रवेश करता है, गले तथा आंत्र पथ में पलता है तथा रक्त और लसिका प्रणाली द्वारा अवशोषित होकर शरीर में फैलता है। विषाणु से संक्रमित होकर रोग के लक्षण विकसित होने में औसतन 5 से 35 दिन का समय लगता है।

जोखिम कारकों में निम्नलिखित सम्मिलित हैं:

- टीकाकरण के अभाव में पोलियो विषाणु के संपर्क में आना
- पोलियों के लिए संवेदनशील क्षेत्रों में यात्रा करना।

उन क्षेत्रों में जहाँ इस रोग का प्रकोप हो वहाँ बच्चे, गर्भवती महिलाएं तथा बुजुर्ग इस रोग से सर्वाधिक प्रभावित होते हैं।

लक्षण

पोलियों संक्रमण के तीन मौलिक प्रकार हैं:

उप नैदानिक संक्रमण

इस श्रेणी के प्रमुख लक्षण हैं-

- सामान्य असुविधा तथा बेचैनी की स्थिति
- सरदर्द
- गले में खराश तथा लालिमा
- मामूली बुखार
- वमन

जिन लोगों में उप नैदानिक पोलियो संक्रमण होता है उनमें उपरोक्त लक्षण 72 घंटे या कम समय तक रहते हैं। नैदानिक पोलियो संक्रमण केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र को प्रभावित करता है तथा यह दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है-

गैर पक्षाघाती पोलियोमाइलिटिस (Non Paralytic Poliomyelitis)

इसके लक्षण प्रमुख हैं-

- पीठ में दर्द होना
- अतिसार
- थकान
- सरदर्द
- चिड़चिड़ापन
- पैरों की मांसपेशियों में दर्द तथा जकड़न
- मामूली बुखार
- गर्दन में दर्द तथा कड़ापन
- पीठ, हाथ, पैर या पेट में दर्द तथा जकड़न
- वमन
- त्वचा में घाव तथा लालिमा होना
- यह लक्षण आमतौर पर 1-2 हफ्ते तक रहते हैं।

पक्षाघाती पोलियोमाइलिटिस (Paralytic Poliomyelitis)

इसके लक्षण प्रमुख हैं-

- लक्षणों के विकसित होने से 5-7 दिन पहले बुखार आना
- पेट में फूला हुआ महसूस करना
- सांस लेने में कठिनाई

- कब्ज
- सरदर्द
- चिड़चिड़ापन अथवा गुस्से पर नियंत्रण कम होना
- गर्दन, पीठ तथा पैरों की मांसपेशियों में ऐंठन, दर्द तथा संकुचन
- मांसपेशियों में दर्द उन्नत चरणों में पक्षाघात का रूप ले लेता है
- प्रभावित क्षेत्र में अधिक संवेदनशीलता तथा हल्के स्पर्श से भी दर्द की अनुभूति।
- निगलने में कठिनाई की अनुभूति

भारत में पोलियो उन्मूलन

वर्तमान में पोलियो विश्व के एक बड़े क्षेत्र से खत्म हो चुका है। सिर्फ दक्षिण पूर्वी एशिया के कुछ देश जैसे भारत, पाकिस्तान में यह रोग अभी भी देखने को मिलता है। इन देशों में इस रोग का संचरण अभी भी सक्रिय है। भारत में पोलियो उन्मूलन कार्यक्रम एक दशक से लंबे समय से चल रहा है।

सघन पल्स पोलियो टीकाकरण (Intensive Pulse Polio Immunizaation) भारत में 1995 में शुरु किया गया जब पाँच साल तक के सभी बच्चों को उनके टीकाकरण स्तर के बावजूद ओरल पोलियो वैक्सीन (OPV) की अतिरिक्त खुराक राष्ट्रीय टीकाकरण दिवस तथा उप राष्ट्रीय टीकाकरण दिवसों पर देना शुरू किया गया।

राष्ट्रीय पोलियो निगरानी परियोजना (National Polio Surveillance Project) जो भारत सरकार तथा WHO के संयुक्त प्रयासों द्वारा चलाई जा रही है, भारत में पोलियो उन्मूलन के लिए निरंतर प्रयासरत है। इस परियोजना के अंतर्गत पोलियो उन्मूलन की रणनीति दो गुना प्रतिरक्षण तथा निगरानी करना है।

वर्ष 2003 में भारत में पोलियो के 225 मामले देखे गए जो 2002 में पाए गए 1600 मामलों की तुलना में काफी कम थे। पिछले कुछ वर्षों में पोलियो उन्मूलन की दिशा में अप्रत्याशित प्रगति हुई है। वर्तमान में पोलियो विषाणु का संचरण उत्तर प्रदेश तथा बिहार के 100 ब्लॉकों तक स्थानीयकृत हो गया है।

भारत में पोलियो उन्मूलन कार्यक्रम काफी पहले शुरु हुआ था तथा 2008 के अंत तक इस रोग के पूर्ण रूप से उन्मूलन की आशा थी परन्तु वर्तमान तक भी भारत पूर्ण रूप से इस समस्या से मुक्त नहीं हो पाया है। इस दिशा में सशक्त प्रयास करने की आवश्यकता है ताकि पूर्ण रूप से यह रोग खत्म हो सके।

2.3.7 एड्स (AIDS) (Acquired Immuno Deficiency Syndrome)

एड्स एक प्रकार की बीमारी है जो Human Immuno Deficiency Virus (HIV) के माध्यम से फैलती है तथा मानव प्रतिरक्षा प्रणाली को प्रभावित करती है। यह धीरे-धीरे शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली की प्रभावशीलता को कम कर देता है तथा अवसरवादी संक्रमण तथा ट्यूमर के लिए संवेदनशीलता बढ़ा देता है।

यह विषाणु श्लेष्म झिल्ली (Mucus membrane) के प्रत्यक्ष संपर्क अथवा HIV युक्त शारीरिक तरल पदार्थ जैसे रक्त, वीर्य, योनि, द्रव तथा स्तनपान द्वारा।

HIV कई प्रकार से संचरित हो सकता है जैसे-

- संदूषित सुई द्वारा
- असुरक्षित यौन संबंधों द्वारा
- गर्भावस्था के दौरान माँ से शिशु में
- शिशु में माता द्वारा स्तनपान कराने पर
- उपरोक्त शारीरिक द्रव्यों में से एक से संपर्क

वर्तमान में एड्स एक महामारी का रूप ले चुका है। 2009 में एक अनुमान के अनुसार दुनिया भर में लगभग 3 करोड़ लोग HIV/AIDS से संक्रमित हैं। प्रतिवर्ष HIV संक्रमण के लगभग 26 लाख नए मामले सामने आते हैं तथा प्रतिवर्ष एड्स से 18 लाख लोगों की मृत्यु हो जाती है।

भारत में एड्स की स्थिति

विश्व में अन्य देशों की तुलना में भारत में HIV/AIDS की प्रसार दर काफी कम है। वर्ष 2007 में भारत में एड्स प्रसार की दर लगभग 0.30 प्रतिशत थी जो विश्व में 89वें स्थान पर थी। भारत में एड्स विरोधी अभियान व्यापक तरीके से चलाया जा रहा है जो विश्व स्तर पर सराहनीय है। भारत में एड्स का प्रसार मुख्य रूप से देश के दक्षिणी तथा उत्तर पूर्वी क्षेत्रों तक ही सीमित है।

भारत में एड्स संक्रमण के कई प्रमुख कारण है-

- श्रम का व्यापक प्रवास
- कम साक्षरता के परिणामस्वरूप ग्रामीण इलाकों में जागरुकता की कमी
- लैंगिक असमानता

भारत सरकार ने नशीले पदार्थों का अंतर्शिरा उपयोग तथा वेश्यावृति की एड्स के प्रसार में भूमिका के बारे में जागरुकता बढ़ायी है।

HIV/AIDS के लक्षण

HIV से संक्रमण के पश्चात् कई लोगों में संक्रमण के लक्षण नहीं दिखाई देते जबकि कुछ में यह विषाणु बुखार, सिर दर्द, थकान आदि लक्षण दिखाता है। तत्पश्चात् कुछ हफ्तों में यह लक्षण गायब हो जाते हैं तथा व्यक्ति स्वयं को सामान्य महसूस करता है। यह लक्षण रहित अवस्था कई सालों तक बनी रहती है। रोग की प्रगति व्यक्तियों के बीच व्यापक रूप से भिन्न होती है। रोग को पहचानने में कुछ महीनों से लेकर 10 साल तक का समय लग सकता है।

- इस अवधि के दौरान यह विषाणु सक्रियता से बढ़ता है तथा प्रतिरक्षा प्रणाली की कोशिकाओं को संक्रमित कर नष्ट कर देता है।
- हालांकि संक्रमित व्यक्ति में कोई लक्षण दिखाई नहीं देते परन्तु वह व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को HIV संक्रमण कर सकता है।

HIV/AIDS संक्रमण के बाद की स्थिति है जब प्रतिरक्षा प्रणाली के प्रभावित होने से शरीर अपनी रोग प्रतिरोधक क्षमता धीरे-धीरे खोने लगता है। एड्स के साथ होने वाले संक्रमणों को अवसरवादी संक्रमण (Opportunistic Infections) कहा जाता है। जैसेः

- Pneumocystis के कारण निमोनिया
- मस्तिष्क में संक्रमण
- Mycobacterium avium complex जीवाणु द्वारा व्यापक संक्रमण, जिसके कारण बुखार तथा वजन क्षति हो सकती है।
- ग्रासनली में यीस्ट का संक्रमण जिस कारण खाना निगलने में दर्द होना।
- Histoplasmosis जैसे फफूंद की प्रजाति के कारण व्यापक संक्रमण जो बुखार, खांसी, रक्ताल्पता तथा कई अन्य समस्याएँ पैदा कर सकता है।

कमजोर प्रतिरक्षा प्रणाली के कारण शरीर में कई असमान्य स्थितियां उत्पन्न हो सकती हैं-

- मस्तिष्क की लसिका प्रणाली में कैंसर की स्थिति पैदा करना।
- शरीर के मुलायम ऊतकों में एक प्रकार का कैंसर विकसित होना जिसे Kaposi Sarcoma कहा जाता है। इस कारण त्वचा अथवा मुहँ में भूरे, लाल अथवा बैंगनी धब्बे विकसित हो जाते हैं।

HIV संक्रमण की रोकथाम हेतु उपाय

अथक प्रयास के बावजूद भी HIV के खिलाफ कोई कारगर दवा विकसित नहीं हो पाई है। इसलिए संक्रमण को रोकना ही एकमात्र उपाय है।

यहाँ पर हम कुछ निवारण तरीकों की जानकारी दे रहे हैं-

- यौन संबंधों में सुरक्षा अपनाना
- दवाओं के लिए एक ही सुई इस्तेमाल न करना

- HIV संक्रमित गर्भवती महिला यदि गर्भावस्था तथा प्रसव के दौरान और बच्चे के जीवन के 6 माह तक उचित देखभाल तथा दवाएं ले तो संक्रमण की संभावना काफी हद तक कम हो जाती है।

गर्भावस्था में HIV संक्रमण का जितना जल्दी हो सके परीक्षण होना चाहिए तथा उचित इलाज कराना चाहिए।

एड्स नियंत्रण हेतु सरकार की नीतियां

राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण संगठन (नाको/ NACO) भारत सरकार वह सर्वोच्च संगठन है जो HIV/AIDS के नियंत्रण हेतु उत्तरदायी है। नाको द्वारा प्रतिवर्ष एड्स के ताजा मामलों के आंकड़े इकट्ठे किए जाते हैं।

नाको के एड्स नियंत्रण अभियान में निजी क्षेत्रों में जागरूकता अभियान भी शामिल है। देश की मध्यम वर्ग की जनसंख्या को जागरूक करने के लिए HIV/AIDS संबंधी टीवी कार्यक्रम तथा फिल्में दिखाई जाती हैं।

इन कार्यक्रमों का एक महत्वपूर्ण घटक है HIV/AIDS संक्रमित लोगों को गैर संक्रमित व्यक्तियों के साथ सम्मिलित करना। वर्तमान में एड्स से संक्रमित व्यक्तियों को समाज में अच्छी दृष्टि से नहीं देखा जाता। इसलिए यह आवश्यक है कि इस रोग हेतु जनता को जागरुक किया जाए। HIV/AIDS वर्तमान में मृत्यु का एक बड़ा कारण बन चुका है जिसकी अभी तक कोई विश्वसनीय दवा उपलब्ध नहीं है। इसलिए इसके संक्रमण को रोकना तथा जागरुकता ही एकमात्र उपाय है।

वर्ष 2010 में नाको द्वारा पहली बार HIV/AIDS शैक्षिक सामग्री उपलब्ध कराने हेतु मंजूरी दी गई।

2.3.8 प्रजनन तथा बाल स्वास्थ्य सुरक्षा

वर्तमान में विकासशील देशों में महिलाओं का जीवन गरीबी, अभाव, संतुलित आहार की कमी, स्वास्थ्य सेवाएं तथा शिक्षा के अभाव के कारण एक दुष्चक्र के समान है। इसलिए कुपोषण व्यापक रूप से प्रचलित है।

प्रत्येक वर्ष लाखों की संख्या में महिलाओं, बच्चों तथा नवजात शिशुओं की मृत्यु ऐसे रोगों के कारण हो जाती है जिनका उपचार संभव है। उचित उपचार तथा दवाएं उपलब्ध होने के बावजूद भी सही समय इनका उपयोग नहीं हो पाता।

यदि हम दुनियाभर के आंकड़ों पर नजर डालें तो हमें पता चलेगा किः

- 60 लाख से ज्यादा महिलाएं शिशु को घर पर ही बिना किसी चिकित्सकीय सुविधा के जन्म देती हैं।
- लगभग 5,30,00 महिलाओं की मृत्यु गर्भावस्था की जटिलताओं के कारण होती है तथा इस संख्या में लगभग 68,000 मौतें असुरक्षित गर्भपात के कारण होती है।
- लगभग 40 लाख बच्चों की मृत्यु जन्म के बाद जीवन के पहले महीने के भीतर ही हो जाती है।
- लगभग 10 लाख से अधिक बच्चे 5 वर्ष से कम उम्र में ही मर जाते हैं तथा उपरोक्त सभी मामलों में लगभग 99 प्रतिशत मामले निम्न तथा मध्यम आय वाले देशो में होते हैं।

प्रजनन तथा बाल सुरक्षा मुद्दे पर निरंतर देखभाल तथा कार्य वर्तमान चुनौतियों का सामना करने में लाभदायक सिद्ध हो सकते हैं। यह महिलाओं तथा शिशुओं के स्वास्थ्य सुधार तथा जीवन प्रत्याशा को बढ़ाने में भी सहायक होते हैं।

मातृ तथा शिशु स्वास्थ्य देखभाल के दो प्रमुख पहलू हैं- मातृ, नवजात शिशु तथा बच्चों की देखभाल की निरंतरता तथा घर से लेकर स्वास्थ्य केन्द्रों तक स्वास्थ्य देखभाल की निरंतरता। दोनों ही दृष्टिकोण में प्रजनन तथा बाल स्वास्थ्य सुरक्षा ही प्रथम उद्देश्य है।

प्रजनन तथा बाल स्वास्थ्य सुरक्षा कार्यक्रमों के मूल्यांकन, प्रभाव संकेतकः

- मातृ मृत्यु दर
- पूर्ण प्रजनन दर
- संस्थागत प्रसव
- शिशु मृत्यु दर
- पाँच वर्ष से कम उम्र के बच्चों की मृत्यु दर

भारत में यह कार्यक्रम कई अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं के सहयोग द्वारा चलाया जा रहा है जैसे विश्व स्वास्थ्य संगठन, UNICEF, DFID (Deptt. For International Development from UK) आदि।

भारत में स्वास्थ्य तथा परिवार कल्याण कार्यक्रम की स्थिति

भारत में स्वास्थ्य तथा परिवार कल्याण कार्यक्रम 1951 में राष्ट्रीय परिवार नियोजन कार्यक्रम के साथ शुरु किया गया। परिवार नियोजन कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण करना था। इस कार्यक्रम के पश्चात् देशभर से अनुभव इकट्ठे करने के बाद यह पता चला कि महिलाओं (प्रजनन आयु समूह) तथा बच्चों (5 वर्ष तक) का स्वास्थ्य अत्यंत महत्वपूर्ण है तथा जनसंख्या वृद्धि को कम करने की दृष्टि से यह एक चिंतनीय विषय है। दृष्टिकोण के इस बदलाव ने परिवार नियोजन के स्थान पर परिवार कल्याण को महत्व देना उचित समझा।

प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य कार्यक्रम भारत में 15 अक्टूबर 1997 को शुरू किया गया। इसका प्रथम उद्देश्य महिलाओं तथा बच्चों में स्वास्थ्य सुधार, एकीकृत तथा अच्छी गुणवत्ता वाली स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध कराना है।

कार्यक्रम के प्रमुख घटक हैं-

- मातृ एवं बाल स्वास्थ्य की प्रभावी देखभाल
- गर्भनिरोधक उपयोग तथा देखभाल में वृद्धि
- अवांछित गर्भधारण का सुरक्षित प्रबंधन
- कमजोर वर्ग के लिए पोषाहार सेवाएं
- किशोर वर्ग हेतु प्रजनन स्वास्थ्य सेवाएं
- प्रसूति रोग समस्याओं की रोकथाम तथा उपचार
- गर्भाशय (Uterine), ग्रीवा (Cervical) तथा स्तन कैंसर की जांच तथा उपचार।

2.4 पोषण जनित रोग

अब हम संक्षिप्त में दूसरी श्रेणी की सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्याओं की चर्चा करेंगे जो पोषण से संबंधित हैं। समुदाय में पोषण समस्याओं का एकमात्र कारण कुपोषण है जो कम या ज्यादा दोनों प्रकार में हो सकता है।

विश्व बैंक के अनुसार भारत में कुपोषण के शिकार बच्चों की संख्या काफी अधिक है तथा विश्व में भारत इस समस्या के दृष्टिकोण से दूसरे स्थान पर है। कुपोषण मुख्यतः ग्रामीण इलाकों में देखने को मिलता है।

कुपोषण के निर्धारक निम्नलिखित हैं-

- मातृ कुपोषण
- जन्म के समय बच्चे का वजन कम होना
- बच्चे को आहार देने के दोषपूर्ण तरीके
- आहार अपर्याप्तता
- लगातार संक्रमण होना
- बड़े परिवार समूह
- महिला निरक्षरता
- अंधविश्वास तथा मिथक

कुपोषण हेतु समुदाय में कुछ समूह अत्यधिक संवेदनशील है। जैसेः

- गर्भवती तथा धात्री महिलाएं
- बच्चे/शिशु
- शाला पूर्व बच्चे
- किशोर
- बुजुर्ग
- सामाजिक रूप से अलग/उपेक्षित वर्ग

भारत में कुछ प्रमुख पोषण समस्याएं हैं जो सार्वजनिक स्वास्थ्य से जुड़ी हुई हैं-

- पोषण रक्ताल्पता
- आयोडीन अल्पता विकार
- फ्लोरोसिस
- मोटापा
- हृदय रोग
- मधुमेह
- कैंसर

*यहाँ पर दी जा रही जानकारी को पूर्व में दी गई जानकारी के साथ पढ़ा जाए। पोषण से संबंधित उपरोक्त सभी समस्याओं के बारे में विस्तारपूर्वक आप पहले सत्र में जान चुके हैं। सभी रोगों का एक संक्षिप्त विवरण यहाँ दिया जा रहा है।

2.4.1 प्रोटीन उर्जा कुपोषण

प्रोटीन उर्जा कुपोषण शरीर में उर्जा तथा प्रोटीन की कमी को दर्शाता है। भारत में 1-2% शालापूर्व बच्चे इस रोग से ग्रस्त हैं।

प्रोटीन उर्जा कुपोषण के मुख्य कारक

- भोजन की मात्रा तथा गुणवत्ता दोनों में अपर्याप्त सेवन
- संक्रमण जैसे अतिसार, श्वसन संक्रमण, खसरा, कृमि संक्रमण

प्रोटीन उर्जा कुपोषण में योगदान करने वाले कारक

- खराब पर्यावरणीय स्थिति
- बड़े परिवार समूह
- खराब मातृ स्वास्थ्य
- समय से पूर्व स्तनपान रोकना
- बच्चे के पालन तथा खिलाने से संबंधित प्रतिकूल प्रथाओं का प्रयोग
- पूरक भोजन का देरी से उपयोग

प्रोटीन उर्जा कुपोषण के नैदानिक प्रकार

- मरास्मस
- क्वाशिमोरकर

मरास्मस- यह प्रोटीन उर्जा कुपोषण का एक आम प्रकार है जो 1 वर्ष से कम उम्र के बच्चों में पाया जाता है। यह रोग लगभग सभी पोषण तत्वों विशेषकर प्रोटीन तथा कैलोरी की गंभीर कमी के कारण होता है। इस दशा में शरीर में मांसपेशियों का अत्यधिक क्षय दिखाई देता है।
अन्य लक्षण हैं-

- व्यापक ऊतकों तथा मांसपेशियों का क्षय
- शुष्क तथा गीली त्वचा
- उम्र के अनुसार लम्बाई कम होना
- बालों का भूरा, पीला तथा विरल होना
- मानसिक मंदता
- शरीर का तापमान कम होना (Hypothermia)
- श्वास तथा नाड़ी दर धीमी होना
- शोथ की अनुपस्थिति

क्वाशिओरकर- यह रोग 2-3 वर्ष के बच्चों में देखने को मिलता है। यह प्रोटीन उर्जा कुपोषण का गंभीर रूप है जो आहार में प्रोटीन की मात्रा तथा गुणवत्ता में कमी के कारण होता है। इस रोग

में सूक्ष्म पोषक तत्व जैसे लौह लवण, फोलिक एसिड, आयोडिन, सेलेनियम और विटामिन सी की भी कमी हो जाती है। इस रोग में शोथ की स्थिति दिखाई देती है।

अन्य लक्षण हैं-

- शोथ की स्थिति
- विकास विफलता
- पेट का फूलना
- तरल पदार्थ का असामान्य संचरण (Ascites)
- यकृत के आकार का बढ़ना
- दांतों का गिरना तथा त्वचा के वर्ण में अंतर
- Dermatitis
- चिड़चिड़ापन तथा Anorexia

प्रोटीन उर्जा कुपोषण के निवारक उपाय

स्वास्थ्य संवर्धन के उपाय अपनाना जैसे स्तनपात को बढ़ावा देना, कम मूल्य के पूरक आहार का उपयोग, पोषण शिक्षा, प्रोटीन उर्जा युक्त भोजन जैसे दूध तथा अंडे, ताजे फल का उपयोग, टीकाकरण। अन्य उपाय जैसे परिवार नियोजन, बच्चों के जन्म के बीच अंतर रखना, रोग का शीघ्र निदान तथा उपचार आदि।

2.4.2 विटामिन 'ए' की कमी

विटामिन ए शरीर की सामान्य वृद्धि, कोशिकाओं की सामान्य बढ़त, विकास के नियंत्रण, सामान्य वृद्धि तथा प्रजनन कार्यों हेतु अत्यन्त आवश्यक सूक्ष्म पोषक तत्व है। आहार सर्वेक्षणों से पता चलता है कि छोटे बच्चों, किशोरियों तथा गर्भवती महिलाओं में विटामिन ए का सेवन अनुसंशित दैनिक भत्ते (RDA) से काफी कम है।

विटामिन 'ए' की कमी की व्यापकता

भारत में विटामिन ए की कमी के नैदानिक तथा अनैदानिक मामले सबसे ज्यादा देखने को मिलते हैं। हालांकि भारत में विटामिन ए की कमी की व्यापकता 1% प्रतिशत से कम है। भारत में विटामिन ए की कमी के प्रमुख लक्षण जैसे Night blindness, Xerophthalmia मुख्यतः शालापूर्व बच्चों तथा प्रजनन आयु की और गर्भवती महिलाओं में देखी जाती है।

विटामिन 'ए' की कमी की रोकथाम हेतु उपाय

चूँकि विटामिन 'ए' की कमी एक प्रमुख सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्या के रूप में उभर कर सामने आई है। इसके लिए भारत सरकार द्वारा पोषण संबंधी दृष्टिहीनता के खिलाफ रोगनिरोधी कार्यक्रम शुरु किया गया है।

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 1-3 वर्ष के बच्चों को विटामिन ए की खुराक मुंह द्वारा पिलाई जाती है। यह कार्यक्रम केन्द्र सरकार द्वारा पोषित है। इस कार्यक्रम की पहुँच और बेहतर बनाने के लिए इसे आठवीं योजना में टीकाकरण कार्यक्रम के साथ सम्मिलित किया गया। संशोधन के पश्चात् यह तय किया गया कि विटामिन ए की 100,000 अंतर्राष्ट्रीय इकाई (IU) की पहली खुराक शिशु को नौंवे महीने में खसरे के टीके के साथ दी जाएगी तथा दूसरी खुराक 18 महीने में DPT तथा OPV की बूस्टर खुराक के साथ दी जाएगी। इसके पश्चात् बच्चों को 36 महीने की उम्र तक हर छः महीने में 2 लाख IU विटामिन ए की खुराक उपलब्ध कराई जाएगी। दसवीं पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत यह अनुशंसित किया गया कि विटामिन ए की भारी खुराक साल में दो बार बच्चों को उपलब्ध कराई जाए।

अन्य सूक्ष्म पोषक तत्वों के साथ विटामिन ए की नैदानिक कमी देखने को मिलती है इसलिए व्यापक आहार विविधीकरण कार्यक्रमों की आवश्यकता है जो किशोरियों तथा महिलाओं की पोषक स्थिति में सुधार कर सकें।

2.4.3 रक्तालपता

रक्ताल्पता अथवा लौह लवण की कमी द्वारा रक्ताल्पता एक गंभीर तथा व्यापक सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्या है। यह समस्या विकसित तथा विकासशील देशों दोनों में दिखाई देती है। विश्व की लगभग 20-50 प्रतिशत जनसंख्या विशेषकर युवा बच्चे इस समस्या ग्रस्त हैं। यह समस्या विकासशील देशों में गरीबी, अपर्याप्त आहार, संक्रामक रोग तथा प्रतिरोधक क्षमता में कमी के कारण ज्यादा गंभीर है।

भारत में किशोरियाँ इस समस्या से सर्वाधिक प्रभावित होती हैं जिसके अन्य परिणाम भी होते हैं जैसे शारीरिक एवं बोधात्मक क्षमता में कमी, अस्वस्थता, रजोदर्शन की शुरुआत में देरी आदि। रक्त में हीमोग्लोबिन की मात्रा को जानकर आसानी से रक्ताल्पता का पता लगाया जा सकता है। रक्ताल्पता, अस्वस्थता तथा कुपोषण दोनों का ही प्रबल संकेतक है। रक्ताल्पता अथवा एनीमिया शरीर में सिर्फ लौह लवण की ही नहीं अपितु अन्य पोषक तत्व जैसे Ca, Iodine, Vit A, Zn तथा Folic acid की कमी को भी दर्शाता है।

रक्ताल्पता के लिए उत्तरदायी जोखिम कारक

- आहार में लौह लवण की कमी जिस कारण लौह लवण जैविक रूप से शरीर में उपलब्ध नहीं हो पाता
- जीवन के तीव्र वृद्धि चरण जैसे किशोरावस्था, गर्भावस्था, (रक्त की मात्रा में वृद्धि, भ्रूण, Placenta तथा ऊतकों का विकास) तथा एकाधिक गर्भावास्थाएं
- खाद्य संवेदनशीलता, कृमि संक्रमण, मासिक धर्म, रक्त दान, शल्य प्रक्रियाओं तथा गर्भनिरोधक के रूप में इस्तेमाल होने वाले अंतर्गर्भाशयी उपकरणों के कारण रक्त क्षय होना

- आहार में लौह लवण की पर्याप्तता होने पर भी आहार में घटकों का उपस्थित होना जो शरीर में लौह लवण के अवशोषण को नकारात्मक रूप से प्रभावित करते हैं। जैसे Phytate, Oxalate इत्यादि अथवा आहार में उन पोषक तत्वों की कमी होना जो लौह लवण के अवशोषण को बढ़ाते हैं जैसे विटामिन सी इत्यादि।

रक्ताल्पता की रोकथाम

देश में एनीमिया की व्यापकता तथा एक उभरती हुई सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्या के रूप में सामने आने पर यह आवश्यक है कि इस रोग की रोकथाम के उपाय किए जाए। अतः सरकार द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर राष्ट्रीय पोषण रक्ताल्पता रोगनिरोधी कार्यक्रम चलाया जा रहा है।

यह कार्यक्रम 1970 में महिलाओं तथा बच्चों में रक्ताल्पता को रोकने हेतु चलाया गया था। इसके अन्तर्गत महिलाओं तथा बच्चों को लौह लवण तथा फोलिक एसिड की गोलियां स्वास्थ्य केन्द्रों द्वारा मुफ्त में उपलब्ध कराई जाती हैं। यह कार्यक्रम मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य विभाग, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय द्वारा चलाया जा रहा है तथा अब यह प्रजनन तथा बाल स्वास्थ्य कार्यक्रम का हिस्सा है।

पोषण शिक्षा, लौह लवण तथा folic acid युक्त भोज्य पदार्थों का समुचित सेवन तथा इनके अवशोषण को बढ़ाने देना इस कार्यक्रम के महत्वपूर्ण घटक हैं। रक्ताल्पता के प्रबन्धन हेतु दसवीं पंचवर्षीय योजना में अभिकल्पित प्रमुख रणनीतियाँ निम्नलिखित हैं-

- सभी स्थूल तथा सूक्ष्म पोषक तत्वों की आवश्यकता पूरी करने के लिए आहार सेवन में सुधार
- लौह लवण, फोलिक एसिड से समृद्ध तथा लौह के अवशोषण को बढ़ावा देने वाले खाद्य पदार्थों का आहार में विविधीकरण द्वारा समावेश करना
- खाद्य समृद्धिकरण विशेषकर लौह लवण तथा आयोडीन युक्त नमक के उपयोग को बढ़ावा
- पूर्णतः आहार सेवन को सुधारने तथा लौह लवण तथा फोलिक एसिड युक्त खाद्य पदार्थों को बढ़ावा देने के लिए स्वास्थ्य एवं पोषण शिक्षा देना
- संवेदनशील समूहों (विशेषकर गर्भवती महिलाएं तथा किशोरियाँ) में रक्ताल्पता की शीघ्र जांच
- रक्ताल्पता की गंभीरता, प्रकार, व्यक्ति की शारीरिक स्थिति तथा समय के अनुसार उचित प्रबन्धन तथा उपचार

दसवीं पंचवर्षीय योजना की रणनीतियाँ कुछ संस्थानों में परिचालित हुई हैं जैसे छत्तीसगढ़, उत्तराखण्ड में PDS, ICDS के माध्यम से संपूरक आहार की आपूर्ति।

2.4.4 आयोडीन अल्पता विकार

आयोडीन अल्पता विकार (IDD) भी भारत में प्रमुख सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्या है। अन्य सूक्ष्म पोषक तत्वों के विपरीत आयोडीन की अल्पता का कारण सिर्फ भोज्य पदार्थों में कमी नहीं अपितु पानी तथा मिट्टी में भी आयोडीन की कमी होता है। यह विकार एक परिभाषित भौगोलिक क्षेत्र में रह रहे सभी सामाजिक वर्गों को प्रभावित करती है।

आयोडीन अल्पता विकार की व्यापकता

दुनिया भर में आयोडीन अल्पता विकार एशिया महाद्वीप के देशों विशेषकर दक्षिण पूर्वी एशियाई देशों में सर्वाधिक दिखाई देता है। हालांकि अन्य दक्षिण पूर्वी एशियाई देशों की तुलना में भारत में यह समस्या कम पाई जाती है फिर भी यह समस्या सर्वव्यापी है तथा लाखों लोगों को प्रभावित करती है। एक अनुमान के अनुसार भारत की जनसंख्या का एक तिहाई हिस्सा आयोडीन अल्पता विकार हेतु संवेदनशील है। भारत में यह समस्या बच्चों में अधिक देखने को मिलती है। भारत में आयोडीन अल्पता विकार के कारण बच्चे बड़ी संख्या में मानसिक अपंगता के शिकार हो जाते हैं। भारत में लगभग 41 जिलों में आयोडीन अल्पता विकार की समस्या उपस्थित है। आयोडीन युक्त नमक का सेवन इस समस्या से बचने का सरल तथा सस्ता तरीका है।

लक्षण तथा संकेत

आयोडीन की कमी के कारण रक्त में थायरॉक्सिन (Thyroxine) हारमोन की अल्पता हो जाती है। जिस कारण थायराइड ग्रन्थि की जैव रासायनिक प्रक्रियाओं में तेजी से वृद्धि हो जाती है। तेजी से हो रहे कोशिकीय विकास तथा प्रसार के कारण थायराइड ग्रन्थि में सूजन आ जाती है जिसे गण्डमाला अथवा गॉइटर (Goitre) कहते हैं।

Cretinism भी आयोडीन अल्पता विकार एक स्थिति है। मानसिक मंदता, गूंगापन-बहरापन, भेंगापन, व्यक्ति की चाल में विकार, Hypothyroidism तथा विकास अवरुद्धता इसके प्रमुख लक्षण हैं।

आयोडीन अल्पता विकार के संभावित जोखिम कारकों की सूची निम्नलिखित है-

- सेलेनियम (selenium) की कमी
- गर्भावस्था
- विकिरण
- पोषक तत्वों के अवरोधक तत्व जैसे Goitrogens का सेवन करना
- तम्बाकू, शराब का सेवन/धूम्रपान
- गर्भ निरोधक गोलियों का सेवन

राष्ट्रीय गण्डमाला (Goitre) नियंत्रण कार्यक्रम National Goitre control Programme

भारत सरकार द्वारा यह रोग नियंत्रण कार्यक्रम 1962 में शुरू किया गया। प्रारंभ में इस कार्यक्रम का उद्देश्य उप-हिमालयी गण्डमाला क्षेत्र में रहने वाले लोगों को आयोडीन युक्त नमक उपलब्ध कराना था।

1980 में इस कार्यक्रम का मूल्यांकन किया गया जिससे पता चला कि नमक आयोडिनीकरण की मौजूदा सुविधाएं देश की आवश्यकताओं को पूरा करने में पूर्णतः सक्षम नहीं है। उत्पादन स्थल पर गुणवत्ता नियंत्रण अपर्याप्त है तथा परिवहन और भंडारण में आयोडीन हानि अत्यधिक है। आयोडीनयुक्त नमक के प्रयोग के बारे में लोगों के बीच जागरूकता भी कम थी।

तत्पश्चात् आयोडीन युक्त नमक की सर्वव्यापी पहुँच सुनिश्चित करने हेतु कई कदम अनुशंसित किए गए:

- नमक के आयोडिनीकरण के लिए निजी क्षेत्रों में भी उत्पादन सुनिश्चित करवाना
- उत्पादन स्थल पर गुणवत्ता नियंत्रण सुनिश्चित करना
- नमक को पौलीथीन में पैक करवाना जिससे परिवहन तथा भंडारण में हानि कम हो
- उपभोगता स्तर पर नमक की आयोडीन मात्रा का परीक्षण
- सिर्फ आयोडीनकृत नमक के उपयोग पर बल देना तथा जागरुकता फैलाना

1980 के बाद इस कार्यक्रम को सिर्फ उप हिमालयी क्षेत्र तक सीमित न रखकर पूरे देश में चलाया गया।

राष्ट्रीय आयोडीन अल्पता विकार नियंत्रण कार्यक्रम (NIDDCP)

अगस्त, 1992 केन्द्रीय स्वास्थ्य परिषद् द्वारा राष्ट्रीय गण्डमाला नियंत्रण कार्यक्रम NGCP को NIDDCP का नाम देने का फैसला लिया गया। इस कार्यक्रम का लक्ष्य गण्डमाला के अतिरिक्त आयोडीन अल्पता के अन्य विकारों की व्यापकता को कम करना भी था।

मानव उपभोग हेतु गैर आयोडीनीकृत नमक की बिक्री पर प्रतिबंध

घरेलू स्तर पर आयोडीनयुक्त नमक के निम्न उपयोग के कारण, भारत सरकार द्वारा 1997 में सभी राज्यों तथा संघ राज्य क्षेत्रों में गैर आयोडीनीकृत नमक की बिक्री पर प्रतिबंध लगा दिया गया।

इन सभी कार्यक्रमों तथा प्रयासों द्वारा यह समस्या काफी हद तक कम हो गई है तथा आयोडीन अल्पता विकार की व्यापकता में 10 प्रतिशत तक कमी आ गई है।

2.4.5 फ्लोरोसिस

फ्लोरोसिस एक सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्या है जो फ्लोराइड नामक तत्व की अधिकता के कारण होती है। फ्लोराइड के अधिक सेवन (विशेषकर पीने के पानी द्वारा) के कारण फ्लोरोसिस हो सकता है जिस कारण दांत तथा हड्डियां सर्वाधिक प्रभावित होते हैं। यदि इसकी अधिकता

मध्यम मात्रा में हो तो मूलतः दांत प्रभावित होते हैं परन्तु लम्बी अवधि तक भारी मात्रा में इसका सेवन हड्डियों से संबंधित गंभीर समस्याएं उत्पन्न कर सकता है।

पीने के पानी की गुणवत्ता नियंत्रण द्वारा फ्लोरोसिस की समस्या को रोका जा सकता है। दंत फ्लोरोसिस, फ्लोराइड की अधिकता द्वारा देखने को मिलती है जो हड्डियों की फ्लोरोसिस से काफी पहले होती है। दंत फ्लोरोसिस के नैदानिक लक्षणों जैसे दांतों में धब्बे तथा गड्डे होने से इसकी पहचान की जा सकती है।

ज्यादा गंभीर दशाओं में दांतों का enamel पूर्णतः क्षतिग्रस्त हो सकता है। यह स्थिति तब अधिक गंभीर होती है जब फ्लोराइड की अधिकता के साथ व्यक्ति कुपोषण से भी ग्रस्त हो जैसे प्रोटीन, उर्जा, विटामिन डी अथवा ए की कमी। लम्बे समय तक अधिक मात्रा में फ्लोराइड लेने से हड्डियों के जोड़ों में जकड़न तथा दर्द इसके प्रारंभिक लक्षण हैं। गंभीर मामलों में हड्डियों के ढांचे में बदलाव आ जाता है तथा स्नायु (ligaments) कड़े हो जाते हैं जिसके परिणामस्वरूप मांसपेशियों में दर्द होता है।

तीव्र उच्च फ्लोराइड स्तर के कारण तत्काल प्रभाव जैसे पेट में दर्द, जी मचलाना तथा वमन आदि हो सकते हैं।

कारण

आमतौर पर पीने के पानी में फ्लोराइड के संदूषण के कारण यह रोग होता है। फ्लोरोसिस से प्रभावित लोग अकसर भोजन, पानी तथा हवा (गैसीय औद्योगिक अपशिष्ट) द्वारा भी फ्लोराइड के संपर्क में आते है। हालांकि पीने का पानी आमतौर पर सबसे महत्वपूर्ण स्रोत है।

फ्लोरोसिस की व्यापकता

यह माना जाता है कि दुनिया भर में लाखों लोग फ्लोरोसिस की समस्या से ग्रस्त हैं परन्तु दंत फ्लोरोसिस के सामान्य लक्षण बहुतायत में दिखाई देते हैं।

रोकथाम

पीने के पानी से फ्लोराइड को समाप्त करना कठिन तथा महंगा कार्य है। इसलिए इसकी रोकथाम का उपाय है कि सुरक्षित फ्लोराइड स्तर वाले सुरक्षित पेय जल का विकल्प चुना जाए। इसलिए जल में फ्लोराइड के स्तर को कम करने हेतु कई उपाय शामिल हैं जैसे कोलतार Alumina का उपयोग। इस तकनीक को Nalgonda Technique कहा जाता है।

- फ्लोराइड के उचित उपयोग हेतु स्वास्थ्य शिक्षा उपलब्ध कराना।
- संवेदनशील क्षेत्रों में माताओं को शिशु को स्तनपान करने हेतु प्रोत्साहित करना क्योंकि माँ के दूध का फ्लोराइड स्तर अपेक्षाकृत कम होता है।
- फ्लोरोसिस से बचाव हेतु संवेदनशील क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को पोषण परामर्श देना चाहिए जिससे वह फ्लोराइड युक्त भोज्य पदार्थो का सेवन कम करें।

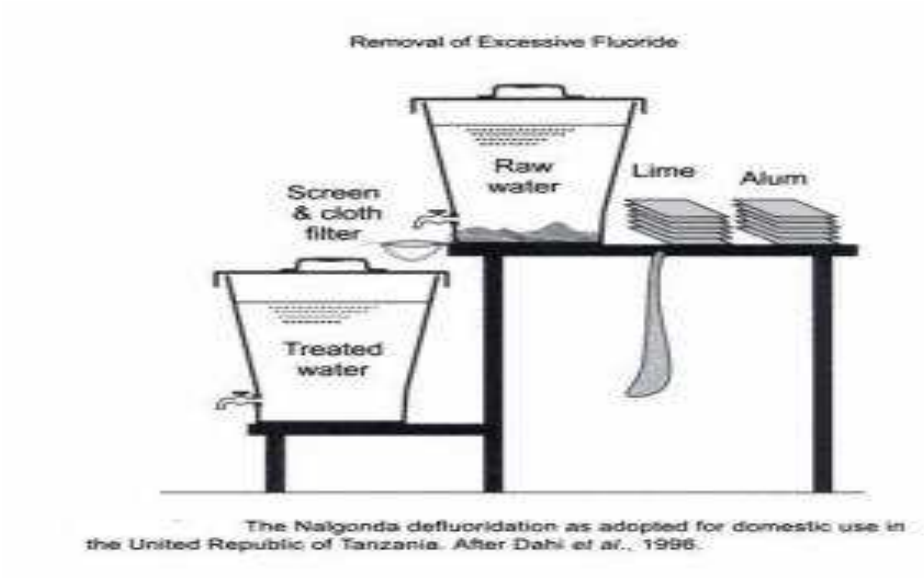

The Nalgonda defluoridation as adopted for domestic use in the United Republic of Tanzania. After Dahi *et al.*, 1996.

2.4.6 मोटापा

मोटापा एक अन्य सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्या है जो पोषण की अधिकता के साथ जुड़ी हुई है। जब व्यक्ति ऊर्जा युक्त भोज्य पदार्थों का अधिक सेवन करता है उस स्थिति में आवश्यकता से अधिक उर्जा शरीर में वसा ऊतकों के रूप में संग्रहित हो जाती है। यह ऊर्जा व्यक्ति के कम शारीरिक क्रियाकलापों के कारण खर्च नहीं हो पाती है जो मोटापे का कारण बनती हैं। जब शरीर का वजन सामान्य वजन से 20 प्रतिशत अधिक हो जाता है, शरीर की इस स्थिति को मोटापा कहते हैं।

कारक

मोटापा कई कारणों से हो सकता है जो कभी एकल तथा कभी संग्रहित रूप में मोटापे का कारण बन सकते हैं।

1. **अनुवांशिक कारण-** जिन परिवारों में माता-पिता मोटापे से ग्रस्त होते हैं उन परिवारों के बच्चों में मोटापे की संभावना ज्यादा होती है।
2. **उम्र तथा लिंग-** किसी भी उम्र तथा लिंग के व्यक्ति में मोटापे की संभावना हो सकती है परन्तु महिलाएं मोटापे से अधिक प्रभावित होती हैं।
3. **खानपान की आदतें-** कुछ विशेष प्रकार की खानपान की आदतें भी मोटापे का कारण बन सकती हैं जैसे अधिक वसा युक्त भोजन का सेवन करना, खाने के समय के बीच में कुछ न कुछ खाते रहना, खाने में फल-सब्जियों के सेवन में कमी, अधिक उर्जा युक्त खाद्य पदार्थों का सेवन तथा तनावग्रस्त माहौल भी मोटापे के कुछ प्रमुख कारक हैं। समाज की बदलती हुई जीवनशैली भी मोटापे का एक महत्वपूर्ण कारक है।

मोटापा तथा संबद्ध विकार

मोटापे के कारण कई अपक्षयी रोगों का खतरा बन जाता है। मोटे लोगों में रक्त कोलेस्ट्राल स्तर बढ़ जाता है जिस कारण Atherosclerosis का खतरा बढ़ जाता है। धमनियों के भीतर वसा के जमाव के कारण उच्च रक्तचाप तथा अन्य हृदय रोगों की संभावना भी बढ़ जाती है। मोटे लोगों में मधुमेह विकसित होने की संभावना भी अधिक होती है। कुछ प्रकार के कैंसर जैसे प्रोस्टेट कैंसर, स्तन कैंसर तथा गर्भाशय, ग्रीवा कैंसर का खतरा मोटे लोगों में अधिक होता है।

अधिक वजन होने के कारण पाँव के जोड़ों पर दवाब पड़ता है जिस कारण गठिया रोग हो सकता है। कई अन्य रोग जैसे सांस संबंधी रोग, जठरांत्रीय रोग भी मोटापे से संबंधित हैं।

भारत में मोटापे की समस्या

भारत में 21वीं सदी में मोटापा एक महामारी की तरह फैल गया है जो देश की 5 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या को प्रभावित कर रहा है। अन्य विकासशील देशों की तरह भारत में भी मोटापे से जनसंख्या तेजी से प्रभावित हो रही है। भारतीय अनुवांशिक रूप से कमर के आसपास वजन संचय के अति संवेदनशील होते हैं।

राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण के 2007 के आंकड़ों के अनुसार भारत में 12% पुरूष तथा 16% महिलाएं मोटापे से ग्रस्त हैं।

2.4.7 हृदय रोग

हृदय शरीर की किसी भी अन्य मांसपेशियों की तरह है जिसे सुचारू रूप से कार्य करने हेतु सही मात्रा में ऑक्सीजन तथा पोषक तत्वों को आपूर्ति हेतु रक्त की आवश्यकता है।

हृदय की आवश्यकताओं की पूर्ति कोरोनरी धमनियों द्वारा होती है जो हृदय की मांसपेशियों के सभी क्षेत्रों में फैली होती हैं। इन्हीं धमनियों कोलेस्ट्राल के जमाव के कारण संकुचन की स्थिति उत्पन्न होती है जिसे प्लाक (plaque) कहते हैं। इस स्थिति में धमनियों में संकीर्णता आने पर रक्त के प्रवाह में रूकावट होती है। हृदय की मांसपेशियों में रक्त के धीरे प्रवाह के कारण दर्द होता है जो एनजाइना का कारण बनता है।

जब यह प्लाक (plaque) धमनियों के भीतर क्षतिग्रस्त होता है यह रक्त के जमाव का कारण बनता है। जिस कारण रक्त का प्रवाह पूर्णतः रूक जाता है तथा हृदय की मांसपेशियों का वह भाग मर जाता है। इस स्थिति को हृदयाघात कहा जाता है।

हृदय रोग के जोखिम कारक

- धूम्रपान
- उच्च रक्तचाप (हाइपरटेंशन)
- मधुमेह
- उच्च कोलेस्ट्रॉल स्तर
- पारिवारिक इतिहास

- मोटापा
- गतिहीन जीवन शैली

हृदय रोग के लक्षण

सीने में दर्द तथा सांस की तकलीफ हृदय रोग के विशिष्ट लक्षण हैं। अन्य लक्षणों में पसीना आना, कंधे अथवा पीठ में दर्द, मिचली, अपच या पेट के ऊपरी हिस्से में दर्द हो सकता है।

भारत में हृदय रोग की स्थिति

हाल के अनुमानों के अनुसार वर्ष 2000 में हृदय रोग के 2.9 करोड़ मामले थे तथा वर्ष 2015 तक इनमें 6.4 करोड़ तक वृद्धि होने का अनुमान है। ग्रामीण इलाकों में हृदय रोगों की व्यापकता दर काफी कम है परन्तु शहरी क्षेत्रों में यह निरन्तर वृद्धि की ओर अग्रसर है।

हृदय रोगों की व्यापकता दर 40 वर्ष या उससे अधिक की आयु समूह में ज्यादा है तथा निरंतर बढ़ रही है। सभी आयु वर्गों में महिलाओं में भी हृदय रोग की व्यापकता दर बढ़ रही है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार विश्व के 60 प्रतिशत हृदय रोगी भारतीय हैं। भारत में हृदय रोग से संबंधित 50 प्रतिशत मौतें 70 वर्ष से नीचे आयु वर्ग में होती हैं। यह प्रवृति अत्यधिक चिंतनीय है क्योंकि इसका असर देश की अर्थव्यवस्था पर पड़ता है।

अध्ययनों से संकेत मिलता है कि दक्षिण एशियाई लोगों में कोलेस्ट्रोल का स्तर ऊँचा है जिस कारण वह हृदय रोगों के लिए अधिक संवेदनशील हैं। साथ ही साथ दक्षिण एशियाई लोगों में उदर क्षेत्र में मोटापे के ज्यादा संकेत मिलते हैं जिस कारण भी वह हृदय रोगों में ग्रस्त होते हैं। नियमित रूप से व्यायाम करना हृदय रोगों में बचाव का एक कारगर उपाय है।

2.4.8 मधुमेह

मधुमेह (Diabetes Mellitus) एक चयापचय संबंधी रोग है जिसमें रक्त का शर्करा स्तर बढ़ जाता है। शरीर में इन्सुलिन हारमोन का उत्पादन न होने से अथवा उत्पादित इन्सुलिन के उपयोग न होने की वजह से रक्त में शर्करा का स्तर बढ़ जाता है।

लक्षण

- Polyuria (लघुशंका की आवृत्ति में वृद्धि)
- Polydipsia (अत्यधिक प्यास लगना)
- Polyphagia (भूख में वृद्धि)

यदि लंबे समय तक रक्त में शर्करा का स्तर उच्च रहे तो आँखों के लेंस के आकार में परिवर्तन हो जाता है जिस कारण दृष्टि पर असर पड़ता है।

आमतौर पर प्रकार-1 मधुमेह से ग्रस्त लोगों में Diabetic ketoacidosis की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इस स्थिति में सांस लेने पर Acetone की विशेष गंध आती है तथा मतली, वमन, पेट दर्द जैसे लक्षण उत्पन्न होते हैं।

मधुमेह के प्रकार

प्रकार-1

इस प्रकार के मधुमेह को किशोर मधुमेह (Juvenile Diabetes) के रूप में भी जाना जाता है। इस स्थिति में शरीर में इन्सुलिन कम या नहीं उत्पन्न होता तथा रोगियों को उम्रभर कृत्रिम इन्सुलिन की आवश्यकता पड़ती है। आमतौर पर इस प्रकार के मधुमेह की पहचान 9-15 वर्ष के बच्चों में की जाती है।

प्रकार-2

इस प्रकार के मधुमेह में शरीर द्वारा इन्सुलिन का संतोषजनक उत्पादन होता है परन्तु शरीर उसे इस्तेमाल करने में असमर्थ होता है। यह मधुमेह का सबसे सामान्य तथा प्रचलित प्रकार है तथा सामान्यतया यह वयस्कों में विकसित होता है। यह प्रकार उन व्यक्तियों में देखने को मिलता है जो अस्वास्थ्यकर आहार लेते हैं, व्यायाम अथवा शारीरिक कार्य कम अथवा नहीं करते हैं तथा अधिक वजन या मोटापे से ग्रस्त हैं।

भारत में मधुमेह की स्थिति

वर्ष 2000 के आंकड़ों के अनुसार विश्व की 2.8 प्रतिशत जनसंख्या मधुमेह से ग्रस्त है तथा प्रकार-2 मधुमेह सबसे आम प्रकार है।

वर्ष 2007 के आंकड़ों के अनुसार पूरे विश्व में 5 देश (भारत, चीन, अमेरिका, रूस तथा जर्मनी) हैं जहाँ मधुमेह की व्यापकता सर्वाधिक है। वर्तमान में भारत में सर्वाधिक जनता मधुमेह से ग्रस्त है। यह अनुमानित है कि भारत में 40 लाख से ज्यादा व्यक्ति मधुमेह से पीड़ित हैं तथा 2025 तक यह संख्या 70 लाख तक पहुँच जाएगी। दूसरे शब्दों में दुनिया का हर पाँचवां मधुमेह रोगी भारतीय है।

मधुमेह एक अपक्षयी रोग है। यह रोग लम्बे समय तक रहता है तथा शरीर के कई महत्वपूर्ण तंत्रों को प्रभावित करता है। हालांकि मधुमेह का इलाज पूर्णतः संभव नहीं है परन्तु यदि इसका सफलतापूर्वक प्रबन्धन किया जाए तो काफी हद तक इसे नियंत्रित किया जा सकता है। मधुमेह का नियंत्रण पूरी तरह रोगी पर निर्भर करता है कि वह अपने आहार, व्यायाम तथा दवा की देखभाल कैसे करता है।

मधुमेह रोग के क्षेत्र में प्रचुर अनुसंधान के कारण इसके नियंत्रण तथा जटिलताओं को कम करने के नए तथा बेहतर तरीके विकसित हुए हैं। इनमें निम्नलिखित शामिल हैं-

- नई बेहतर तथा उन्नत इन्सुलिन चिकित्सा
- मधुमेह प्रकार-2 को नियंत्रित करने की दवाएं जो आसानी से उपलब्ध हैं
- रक्त शर्करा स्तर की नियमित जांच हेतु सरल सुलभ उपकरण
- मधुमेह के कारण प्रभावित शारीरिक अंगों के उपचार की प्रभावी उपलब्धता
- गर्भकालीन मधुमेह चरण के दौरान माँ तथा भ्रूण के स्वास्थ्य प्रबन्धन के बेहतर उपाय

भारत में पिछले दस वर्षों में मधुमेह से पीड़ित व्यक्तियों की संख्या बढ़ गई है जिसमें मुख्यतः महिलाएं शामिल हैं। यह आंकड़े लक्षित जनसंख्या हेतु बड़े पैमाने पर लागत प्रभावी प्राथमिक रोकथाम के प्रयासों की आवश्यकता को रेखांकित करते हैं। यदि मधुमेह छोटी उम्र से शुरू होता है तो उसके प्रभाव लम्बी अवधि तक होते हैं जो शारीरिक रूप से नुकसानदेह हैं ही अपितु आर्थिक दृष्टि से भी व्यक्ति के जीवन पर असर डालते हैं। मधुमेह के उपचार हेतु सिर्फ प्राथमिक दवा चिकित्सा की ही आवश्यकता नहीं है। संतोषजनक वातावरण निर्माण उपलब्ध कराना, मनोसामाजिक तनावों को रोकने के प्रयास तथा जीवनशैली में बदलाव के प्रयासों द्वारा मधुमेह को बेहतर तरीकों से नियंत्रित किया जा सकता है।

अभ्यास प्रश्न 1

1. रिक्त स्थान भरिए।
   a. मलेरिया.....परजीवी के कारण होता है।
   b. लसिका फाइलेरिया के गंभीर मामलों को..... के रूप में जाना जाता है।
   c. भारत सरकार द्वारा संशोधित राष्ट्रीय क्षयरोग नियंत्रण कार्यक्रम (RNTCP) के माध्यम से विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा अनुशासित..... रणनीति को मार्च 2006 से देशभर में 633 जिलों में लागू किया गया।
   d. राष्ट्रीय पोलियो निगरानी परियोजना (National Polio Surveillance Project) भारत सरकार तथा .....के संयुक्त प्रयासों द्वारा चलाई जा रही है
   e. एड्स के साथ होने वाले संक्रमणों को..... कहा जाता है।
   f. आयोडीन की कमी के कारण थायराइड ग्रन्थि में सूजन आ जाती है जिसे..... कहते हैं।

2.5 सारांश

भारत में सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्याओं का अध्ययन रोग, प्रजनन क्षमता तथा पोषण संबंधी समस्याओं की तीन श्रेणियों के अंतर्गत किया जाता है। पहली श्रेणी में संचारी, गैर संचारी तथा नए उभरती हुई सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्याएं आती हैं जिसमें मलेरिया, फाइलेरिया, काला-

अजार, एड्स, तपेदिक, पोलियो तथा कुष्ठ रोग प्रमुख रूप से महत्वपूर्ण हैं। इन रोगों के बचाव हेतु सरकार द्वारा कई रोगनिरोधी कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं।

वर्तमान में विकासशील देशों में महिलाओं का जीवन गरीबी, अभाव, संतुलित आहार की कमी, स्वास्थ्य सेवाएं तथा शिक्षा के अभाव के कारण एक दुष्चक्र के समान है। इसलिए कुपोषण व्यापक रूप से प्रचलित है। प्रजनन तथा बाल सुरक्षा मुद्दे पर निरंतर देखभाल तथा कार्य वर्तमान चुनौतियों का सामना करने में लाभदायक सिद्ध हो सकते हैं। यह महिलाओं तथा शिशुओं के स्वास्थ्य सुधार तथा जीवन प्रत्याशा को बढ़ाने में भी सहायक होते हैं। भारत में प्रजनन तथा बाल स्वास्थ्य सुरक्षा कार्यक्रम कई अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं के सहयोग द्वारा चलाए जा रहा है जैसे विश्व स्वास्थ्य संगठन, UNICEF, DFID-(Deptt. For International Development from UK) आदि।

दूसरी श्रेणी में वह सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्याएं अंतर्निहित हैं जो पोषण से संबंधित हैं। इसमें प्रोटीन उर्जा कुपोषण विटामिन ए की कमी, पोषण रक्ताल्पता, आयोडीन अल्पता विकार, फ्लोरोसिस, मोटापा, हृदय रोग, मधुमेह तथा कैंसर प्रमुख हैं। यह सभी रोग देश के लिए एक प्रमुख चिंता का विषय हैं तथा सरकार द्वारा इन रोगों से निपटने हेतु कई कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं।

2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1. रिक्त स्थान भरिए।
   a. प्लाज्मोडियम (Plasmodium)
   b. फीलपाँव (Elephantiasis)
   c. DOTS (Directly Observed Treatment)
   d. अवसरवादी संक्रमण (Opportunistic Infections)
   e. गण्डमाला अथवा गॉइटर (Goitre)

2.7 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Sehgal Salil and Raghuvanshi Rita S., (2007) Textbook of Community Nutrition, Indian Council of Agricultural Research, New Delhi
2. Swaminathan, M. (2009), Advanced Text Book on Food & Nutrition –Vol 1&2. Banglore printing and publishing Company limited, Banglore

इंटर्नेट स्रोत

3. cfwhyd@ap.gov.in
4. planningcommission.nic.in
5. nvbdcp.gov.in

2.8 निबंधात्मक प्रश्न

1. राष्ट्रीय मलेरिया नियंत्रण कार्यक्रम (NMCP, National Malaria Control Programme) की रणनीतियों की चर्चा कीजिए।
2. फाइलेरिया रोग को परिभाषित कीजिए तथा इसकी उप श्रेणियों का वर्णन कीजिए।
3. कुष्ठ रोग के लक्षण, जटिलताएं तथा रोगथाम एवं उपचार के प्रयासों पर प्रकाश डालिए।
4. भारत में पोलियो उन्मूलन कार्यक्रम तथा एड्स की स्थिति की व्याख्या कीजिए।
5. भारत में पोषण जनित रोगों को सूचीबद्व कीजिए तथा प्रत्येक के लिए सरकार द्वारा चलाए जा रहे रोगनिरोधी कार्यक्रमों की चर्चा कीजिए।

इकाई 3: खाद्य एवं पोषण सुरक्षा

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 खाद्य एवं पोषण सुरक्षाः एक परिचय
  3.3.1 घरेलू स्तर
  3.3.2 सामुदायिक स्तर
3.4 खाद्य एवं पोषण सुरक्षा की प्राप्ति हेतु पहल
  3.4.1 परियोजनाएं
  3.4.2 पोषण तत्वों की प्राप्ति हेतु स्थायी उत्पादन
  3.4.3 खाद्य पदार्थों का समान वितरण
  3.4.4 खाद्य पदार्थों का अंतर-परिवारीय वितरण
  3.4.5 प्राकृतिक आपदाओं में भोजन प्रबंधन
  3.4.6 पोषण पर निगरानी रखना
  3.4.7 अनुसंधान
3.5 सारांश
3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची

3.1 प्रस्तावना

भारत एक कृषि प्रधान देश है, यहाँ खाद्यान्न का सन्तोषप्रद मात्रा में उत्पादन होता है। किन्तु फिर भी खाद्य संकट (food crises) हमारे देश के विभिन्न क्षेत्रों में व्याप्त है। इसके अनेक कारण हैं, जैसे गरीबी, असमान्य खाद्य आवन्टन, प्राकृतिक विपदाएँ आदि। ऐसे अनेक नकारात्मक कारकों के व्याप्त होने पर भी देश की जनसंख्या को इष्टतम पोषण (optimal nutrition) प्रदान करने को 'खाद्य एवं पोषण सुरक्षा' कहते हैं। यह घरेलू व सामुदायिक स्तर पर कल्याण द्वारा कुपोषण के उन्मूलन हेतु बेहद ही लाभप्रद उपाय है। इस इकाई में आप 'खाद्य एवं पोषण सुरक्षा' का अर्थ व उससे जुड़ी आवधारणाओं (concepts) के बारे में विस्तृत रुप से पढ़ेंगे।

3.2 उद्देश्य

- इस इकाई को पढ़कर आप खाद्य एवं पोषण सुरक्षा की अवधारणा, परिभाषा व विभिन्न स्तरों को जानेंगे।

- इस इकाई द्वारा आप खाद्य एवं पोषण के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए भारत में चलने वाली विभिन्न गतिविधियों को जानेंगे।

3.3 खाद्य एवं पोषण सुरक्षाः एक परिचय

प्रत्येक राष्ट्र के स्वास्थ्य व मानव विकास के लिए पर्याप्त पोषण अनिवार्य है। स्वतन्त्रता के बाद हमारे देश को पोषण सम्बन्धी दो प्रमुख समस्याओं का सामना करना पड़ा-

- कृषि उत्पादन व उचित भोजन वितरण प्रणाली की कमी के कारण अकाल (famine) का खतरा।
- गरीबी, क्रय शक्ति व स्वास्थ्य देखभाल में निम्न स्तर के कारण ऊर्जा की कमी जन्य विभिन्न स्वास्थ्य जटिलताएँ।

इन खतरों द्वारा अनेक उपसमस्याएँ जनित हुईं जैसे कुपोषण, सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी (घेंघा, बेरीबेरी, विटामिन ए की कमी जन्य अन्धापन, एनीमिया) आदि। इन सभी से बचाव हेतु 'खाद्य एवं पोषण सुरक्षा' के प्रावधान की आवश्यकता महसूस की गई।

भारत सरकार द्वारा समय-समय पर अग्रिम 5 वर्षों में किये जाने वाले कार्यों की सूची, सम्पूर्ण कार्य प्रणाली व बजट आवन्टन किया जाता है। इसे पंच वर्षीय योजना कहते हैं। उपरोक्त बताए गए पोषण सम्बन्धी खतरों से निबटने हेतु सरकार द्वारा बहु-क्षेत्रीय तथा दीर्घकालीन रणनीति के रुप में 'खाद्य एवं पोषण सुरक्षा' के प्रावधान के लिए प्रत्येक पंच वर्षीय योजना में पर्याप्त मात्रा में बजट आवन्टित किया जाता है।

खाद्य एवं पोषण सुरक्षा/एफएनएस (Food and Nutrition Security/ FNS) को प्रारम्भिक समय में क्षेत्रीय व राष्ट्रीय स्तर पर असमान्य खाद्य वितरण को सन्तुलित करने हेतु पर्याप्त खाद्य उपलब्धता कहा जाता था। बाद में इस तथ्य को महसूस किया गया कि खाद्य एवं पोषण सुरक्षा हेतु सिर्फ पर्याप्त मात्रा में खाद्य उपलब्धता ही काफी नहीं हैं क्योकि कई बार भोजन के शारीरिक रुप से विद्यमान होने पर भी जनसंख्या द्वारा उसका उपभोग नहीं किया जाता। अतः खाद्य एवं पोषण सुरक्षा का तात्पर्य निम्न संशोधित परिभाषा द्वारा समझा जा सकता हैः

''एक सक्रिय, स्वास्थ्य जीवन के लिए हर समय सभी लोगों द्वारा पर्याप्त भोजन का उपभोग खाद्य एवं पोषण सुरक्षा है''।

"Food and nutrition security is adequate access to food for all people at all time for an active, healthy life".

उपरोक्त बताई परिभाषा में भोजन से तात्पर्य खाने और पीने हेतु प्रयोग में लाई जाने वाली सभी वस्तुएँ हैं। भोजन में खाने के साथ-साथ पीने की वस्तुओं को इसलिए सम्मिलित किया गया है क्योंकि एक स्वस्थ जीवन के लिए खाने के साथ-साथ साफ और सुरक्षित पानी की भी आवश्यकता होती है।

राष्ट्रीय खाद्य एवं पोषण सुरक्षा हेतु इसका दो स्तरीय होना अनिवार्य हैः

3.3.1 घरेलू स्तर: खाद्य सुरक्षा की अवधारणा को बड़े पैमाने पर इस्तेमाल किया जाता है परन्तु इस उपाय द्वारा जन कल्याण हेतु घरेलू स्तर पर सफल होना अत्यन्त आवश्यक है। घरेलू खाद्य सुरक्षा से तात्पर्य उस स्थिति से है, जिससे परिवार स्थाई रुप से प्रत्येक सदस्य के लिए सुरक्षित व पर्याप्त भोजन प्राप्त करने में सक्षम हो। इस स्तर को प्राप्त करने के लिए अनेक कठिनाइयाँ सामने आती हैं जैसे- स्त्री-पुरुष में भेद भाव/लिंग भेद, अशिक्षा, स्थाई रोजगार न होना, निम्न परिवारिक आय, परिवार नियोजन की कमी आदि।

3.3.2 सामुदायिक स्तर: घरेलू स्तर के बाद जिस स्तर पर खाद्य सुरक्षा वांछनीय है, वह है सामुदायिक स्तर। इस स्तर पर खाद्य सुरक्षा से तात्पर्य है सम्पूर्ण समुदाय वर्ष भर प्रधान खाद्यान्न (staple food), मौसमी खाद्य (sesaonal food) व स्वच्छ पेयजल आपूर्ति उपयोग हेतु सक्षम हो। सामुदायिक स्तर पर भी विभिन्न समस्याएँ व्याप्त हैं जैसे- आर्थिक व समाजिक रुप से पिछड़े वर्गों में निर्बाध रूप से खाद्यान्न आपूर्ति, विपरीत मौसमों में खाद्य आपूर्ति, स्वच्छ पेयजल आपूर्ति संकट, अज्ञानता, स्वास्थ्य की दृष्टि से संवेदनशील वर्गों की सहायता के लिए साधनों की कमी, सामुदायिक स्वास्थ्य देखभाल में सेवाओं की कमी आदि।

अतः यदि इन दोनों ही स्तरों पर खाद्य सुरक्षा प्राप्त कर ली जाये जो इसके द्वारा इनसे संबद्ध विभिन्न अन्य समस्याओं से भी निबटा जा सकता है। यह निश्चित रुप से राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा होगी।

अभ्यास प्रश्न 1

a. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।
   a. भारत सरकार समय-समय पर अग्रिम 5 वर्षो में किये जाने वाले कार्यों का ब्यौरा .....योजना में देती है।
   b. राष्ट्रीय खाद्य एवं पोषण सुरक्षा हेतु इसका .....एवं .....स्तर पर होना अनिवार्य है।

b. 'खाद्य एवं पोषण सुरक्षा' को परिभाषित कीजिए।

   .....

   .....

   .....

c. स्वतन्त्रता के बाद हमारे देश को पोषण सम्बन्धी किन दो प्रमुख समस्याओं का सामना करना पड़ा?

   .....

   .....

   .....

d. सामुदायिक स्तर पर खाद्य एवं पोषण सुरक्षा को प्राप्त करने के लिए किन-किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है?

……

……

……

3.4 खाद्य एवं पोषण सुरक्षा की प्राप्ति हेतु पहल (Initiatives for Achieving Food and Nutrition Security)

विकसित व विकासशील दोनों ही प्रकार के देशों के लिए खाद्य एवं पोषण सुरक्षा अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है। अतः हमारे देश की सरकार भी इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए विभिन्न उपायों व प्रावधानों का क्रियान्वयन करती है। आइए, इन सभी की विस्तृत रुप से चर्चा करें।

3.4.1 परियोजनाएं: भारत में अनेक उपायों द्वारा जनसंख्या को पोषण की दृष्टि से सुरक्षा प्रदान की जाती है। ऐसी ही कुछ उपाय इस प्रकार हैं-

पर्याप्त उपलब्धता: खाद्य एवं पोषण सुरक्षा के लिए पर्याप्त उपलब्धता पर विशेष बल दिया जाता है। इस संदर्भ में खाद्य की केवल भौतिक उपस्थिति (Physical presence) ही नहीं, अन्य कई चीजों को भी सुनिश्चित किया जाता है। जैसे-

i. उचित खाद्य भण्डारण (Proper food storage), वाणिज्यिक खाद्य आयात (commercial food imports) खाद्य सहायता (food aid) द्वारा राष्ट्र में उचित खाद्य उपलब्धता सुनिश्चित करना।
ii. जनसंख्या की क्रय शक्ति में सुधार लाने हेतु खाद्य का उचित दाम निर्धारण करना।
iii. गैर-कानूनी भण्डारण को रोकना व जमाखोरों के खिलाफ उचित कार्यवाही करना।
iv. देश में खाद्यान्न की वर्ष-भर उपलब्धता बनाने हेतु उचित संसाधनों द्वारा फसल के नुकसान को रोकना।
v. लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली (Targeted public distribution system) द्वारा खाद्य वितरण। उदाहरण के लिए भारत में गरीबी रेखा से नीचे (below poverty line) जीवनयापन करने वाले परिवारों को मात्र 2 रूपये प्रति किलो गेहूँ व 3 रूपये प्रति किलो चावल प्रदान किये जाते हैं।
vi. स्थानीय व राष्ट्रीय खाद्य उत्पादन को बढ़ावा देना ताकि आयात कम से कम हो।

पोषण शिक्षा: पोषण के सुधारने हेतु पोषण शिक्षा बेहद लाभप्रद है। विभिन्न कार्यक्रमों द्वारा जनसंख्या को पोषण के महत्व व सम्बन्धित जानकारियों जैसे कोलस्ट्रम की महत्ता, स्तनपान की अवधि, पूरक-आहार की विशेषता, स्त्री व किशोरी भोजन सम्बन्धित तथ्य, खाना पकाते समय ध्यान रखने योग्य बातें, कम दाम में उचित पौष्टिक भोजन व्यवस्था, स्थानीय खाद्य का महत्व

आदि दी जाती है। इसके द्वारा न सिर्फ लोगों का ज्ञान वर्धन होता है बल्कि वे अपने भोजन व स्वास्थ्य के प्रति सजग भी हो जाते हैं।

विभिन्न शिविरों के माध्यम से पोषण शिक्षा देते आँगनबाड़ी कार्यकर्ता

कुपोषण प्रबंधन: कुपोषण एक ऐसी समस्या है, जो हमारे देश की एक बड़ी जनसंख्या को जकड़े हुए है। भारत में कुपोषण प्रबंधन हेतु अनेक प्रकार के कार्यक्रम चलाए जाते हैं जो कि पोषण पर विशेष महत्व देते हैं। इनमें मुख्य हैं- समेकित बाल विकास कार्यक्रम/आई0सी0डी0एस0 (Integated child development services/ICDS) तथा मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम (mid-day meal programme). इन दोनों के ही बारे में आप विस्तृत रूप से पिछली इकाईयों में पढ़ चुके हैं। ये निम्न कार्य द्वारा कुपोषण रोकते हैं-

i. खाद्य अनुपूरन (food supplementation) व उचित स्वास्थ्य देखभाल।
ii. कुपोषण से पीड़ित व कुपोषण के लिए संवेदनशील व्यक्तियों, बच्चों व उनके परिवारों पर प्रभावी निगरानी।
iii. पंचायती राज संस्थाओं के सहयोग व सामुदायिक भागीदारी द्वारा सेवाओं को उपलब्ध बनाना।
iv. क्षेत्रीय स्वास्थ्य व पोषण स्थिति का रिकार्ड बनाना।
v. सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी की जाँच, रोकथाम व उचित प्रबंधन।
vi. स्वास्थ्य की दृष्टि से सूक्ष्म पोषक तत्वों के लिए भी प्रबंधन बहुत जरूरी है। जैसा कि आप जानते हैं, मुख्य रूप से सूक्ष्म पोषक तत्व सम्बन्धित निम्न रोग निरोधी कार्यक्रम हमारे देश में चलाए जाते हैं -
    - विटमिन ए रोग निरोधी कार्यक्रम (Vitamin A prophylaxis programme)
    - आयोडीन अल्पता विकार नियंत्रण कार्यक्रम (Iodine deficiency disorders control programmme)
    - रक्ताल्पता नियंत्रण कार्यक्रम (Anaemia control programmme)

ये सभी कार्यक्रम संयुक्त रूप से अनेक उपाय करते हैं जैसे -

- विटामिन ए की अत्यधिक कमी से पीड़ितों को इन्जेक्शन द्वारा विटामिन ए की कमी को पूरा करना व प्रत्येक छः महीने में पीड़ितों व पाँच साल से कम उम्र के बच्चों को इन्जेक्शन देना।
- आयोडीनीकृत नमक के उपयोग को बढ़ावा देना व गरीबी रेखा से नीचे की जनसंख्या को आयोडीनीकृत नमक का कम दामों में वितरण करना।
- सभी गर्भवती, धात्री माताओं व शिशुओं को लौहलवण व फोलिक एसिड की गोलियों का मुफ्त वितरण करना।
- लोगों को विटामिन व खनिज लवण युक्त खाद्य स्रोतों की जानकारी देना।

आँगनबाड़ियों में मध्यान्हन भोजन कार्यक्रम द्वारा बच्चों को विभिन्न पौष्टिक व्यन्जनों का वितरण

3.4.2 पोषण तत्वों की प्राप्ति हेतु स्थायी उत्पादन (Sustainable food production to meet nutritional needs): पिछले 50 वर्षों में हमारे देश में हरित क्रान्ति (green revolution) व खाद्य उत्पादन में आत्म निर्भरता होने से खाद्यान्न का उत्पादन चार गुना तक बढ़ गया है। खाद्य उत्पादन को बढ़ाने के लिए अनेक उपाय किये जाते हैं जैसे:

अन्न उत्पादन: देश की बढ़ती आबादी के कारण जनसंख्या को स्थायी रूप से अन्न प्रदान करना अति आवश्यक है। इसके लिए निम्न तरीके अपनाये गयेः

1. किसानों को गेहूँ व चावल के अलावा अन्य मोटे अनाजों को बोने के लिए प्रेरित करना जैसे बाजरा इत्यादि क्योंकि ये अनाज न केवल सस्ते होते हैं बल्कि पोषण तत्वों के भी काफी अच्छे स्रोत होते हैं।
2. सभी किसानों को उचित उत्पादन तकनीकों, कृषि सम्बन्धी जानकारियों को विशेषज्ञों व कृषि कार्यकर्ताओं द्वारा लाभान्वित करना। कृषिक भारती सहकारी लिमिटेड/ कृभको (Krishak Bharti Cooperative Limited/ KRIBHCO) द्वारा चलाए जाने वाली किसान हैल्पलाइन (Kisan Helpline) इसका बहुत अच्छा उदाहरण है। इन कार्यक्रमों के जरिये किसान अपनी कृषि समस्याओं का समाधान विशेषज्ञों द्वारा कराते हैं।

3. उर्वरक क्षमता व फसल की पैदावार के लिए विशेष खाद्य व सिंचाई व्यवस्था उपलब्ध करना।
4. फसल के दौरान या कटाई के पश्चात् होने वाले नुकसान को रोकना।
5. अच्छे किस्म का बीज उचित दामों में गाँव-गाँव तक पहुँचाना।
6. मोटे अनाजों के उत्पादन के साथ-साथ उसके उपयोग को भी बढ़ावा देना।

दालों का उत्पादन: पिछले दो दशकों में हमारे देश में दालों की खपत में बहुत तेजी से गिरावट आई है। यह विशेष रुप से गरीब वर्गों में ज्यादा है। इसकी मुख्य वजह हैं- दालों का स्थिर उत्पादन व बढ़ती लागत। इस प्रवृत्ति को उलटना अत्याधिक आवश्यक है क्योंकि दालें प्रोटीन का मुख्य स्रोत होती हैं। अगर इनका उपभोग न हुआ तो कुपोषण की समस्या और भी विकराल रुप धारण कर लेगी। दालों के उत्पादन में सुधार लाने के लिए विभिन्न दालों व तिलहानों (oil seeds) पर विशेष अनुसन्धान कराये जाते हैं ताकि सस्ती दालों के बीजों को प्राप्त किया जा सके। इसके अलावा देश में विभिन्न सहकारी संस्थाओं व कार्यक्रमों में कुछ विशेष उच्च प्रोटीन युक्त दालों का रियायती दामों (subsidised rate) पर भी वितरण कराया जाता है। किसानों को विशेष ऋण व वित्तीय सहायता द्वारा दालों के उत्पादन के लिए प्रेरित किया जाता है।

बागवानी उत्पादन (Horticulture production): सामान्यतः गरीब वर्गों में यह देखा गया है कि वे मुख्य आहार में पूर्णतः अनाज का ही उपयोग करते हैं। ऐसे बहुत से परिवार भी हैं जिनके दिन भर के भोजन से फल व सब्जियाँ पूर्ण रुप से नदारद होती है। इस स्थिति में सूक्ष्म पोषण तत्व सम्बन्धित स्वास्थ्य समस्याएं और बढ़ जाती हैं। अतः हरी पत्तेदार सब्जियों, पीले फल व सब्जियों के उत्पादन पर भी विशेष ध्यान देना अनिवार्य है। सभी किसानों को प्रोत्साहन व उचित सुविधाओं द्वारा बागवानी के स्थानीय उत्पादन पर विशेष बल दिया जाता है ताकि उस स्थान विशेष की जनसंख्या के उचित मात्रा व कम दामों में भरपूर सब्जियाँ मिलें और वे उसे अपने दैनिक आहार में शामिल करें। खपत बढ़ने से माँग में बढ़ोत्तरी होती है और बढ़ी मांग से

किसान फसल बोने के लिए प्रेरित होते हैं। इसी तथ्य पर बागवानी के उत्पादन में बढ़त की जा रही है।

घरेलू उत्पादन (Household production): विभिन्न प्रकार के खाद्यों के उत्पादन को बढ़ावा देने के साथ-साथ घरेलू उत्पादन पर भी बल दिया जाता है। सभी परिवारों को घरेलू रुप से बागवानी के लिए प्रेरित किया जाता है। कुछ खाद्य ऐसे हैं जो कि विशेष कौशल व देखभाल की मांग नहीं करते जैसे विभिन्न हरी-पत्तेदार सब्जियाँ व कन्द मूल (roots and tubers) जैसे गाजर, मूली इत्यादि। इन खाद्यों को घर में उपलब्ध बगीचे में उगाने के लिए लोगों को प्रोत्साहित किया जाता है ताकि ये खाद्य बिना किसी क्रय के हर समय परिवार को उपलब्ध हो तथा वे इसे अपने दैनिक आहार में शामिल करने का नियम बना लें।

घरेलू उत्पादन द्वारा स्थानीय फल व सब्जियों के उत्पादन व उपयोग को भी बढ़ावा मिलता है। स्थानीय खाद्य न केवल सस्ते व पौष्टिक होते हैं बल्कि उनकी उत्पादन क्षमता उस स्थान विशेष की जलवायु के अनुकूल प्रभाव से बेहद अच्छी होती है। अतः घरेलू उत्पादन द्वारा खाद्य उपलब्धता बढ़ने के साथ-साथ खाद्य सम्बन्धी अच्छी आदतों का विकास यानी ज्यादा खाद्य समूहों को भोजन में शामिल करना व पोषण स्तर में भी सुधार होता है।

खाद्य प्रसंस्करण और संरक्षण: विभिन्न अध्ययनों द्वारा यह पता चला है कि फसल कटाई के दौरान फलों व सब्जियों की कुल फसल लगभग 20 से 30 प्रतिशत नष्ट हो जाती है। इसके कारण कीमतों में वृद्धि होती है। अतः कृषि कौशल और खाद्य प्रसंस्करण पर आधारित विज्ञान और प्रौद्योगिकी किसानों की आय व ग्रामीण रोजगार को बढ़ाने के लिए प्रयास कर रहे हैं। ये विशेषतः निम्न कार्य करते हैं-

i. उत्कृष्ट कौशल द्वारा उत्तम गुणवता की फसल उगाना।
ii. नवीनतम तकनीक किसानों तक पहुँचाकर फसल उत्पादन अधिकतम करना।
iii. प्रौद्योगिकी सहायता द्वारा जीवाणु या मानवीय कारणों द्वारा होने वाले फसल के नुकसान को न्यूनता प्रदान करना।
iv. कम गुणवत्ता वाले खाद्य को भी खाद्य प्रसंस्करण तकनीकों द्वारा उपभोग में लाना जैसे अत्याधिक पके, फटे फलों की जैली, जैम, मुरब्बा बनाना, टमाटर की चटनी व सब्जियों का अचार आदि द्वारा फसल के क्षय (wastage) को रोकना।
v. स्थानीय समुदाय को विभिन्न प्रसंस्करण तकनीकों द्वारा बनाये गये खाद्य उत्पादों की जानकारी देना ताकि स्वरोजगार (self employment) व लघु कुटीर उद्योगों (small scale industries) को भरपूर बढ़ावा मिले।
vi. शिक्षित युवाओं को कृषि क्षेत्र में शामिल करना ताकि उनके कौशल, सूझबूझ व सामुदायिक प्रयत्न द्वारा उत्पादन बढ़ सके।

घरेलू स्तर पर खाद्य प्रसंस्करण और संरक्षण तकनीक द्वारा विभिन्न उत्पाद बनाती महिलाएँ

3.4.3 खाद्य पदार्थों का समान वितरण (Equitable distribution of food Stuff)

राष्ट्रीय स्तर पर खाद्य उपलब्धता को बनाए रखने के लिए खाद्य पदार्थों का समान वितरण अत्यन्त ही जरुरी है। इसके लिए उत्पादित खाद्य व खाद्य उपभोग का प्रतिवर्ष रिकार्ड रखा जाता है। इसके उत्पादन व खाद्य की खरीद दोनों की ही जानकारी रहती है। वर्ष के अन्त में उत्पादित खाद्य में से कितना खाद्य खर्च हुआ यह भी मापा जाता है। जो खाद्य बच जाता है वह अगले वर्ष के लिए भण्डारित कर लिया जाता है। उदाहरण के तौर पर यदि एक साल 100 टन आलू के उत्पादन की सम्भावना है तथा पिछले वर्ष के रिकार्ड के अनुसार प्रतिवर्ष देश की आलू की खपत 150 टन है तो सरकार बाजार में आलू की कमी को रोकने के लिए पहले से ही 50 टन आलू के आयात के प्रबन्ध कर लेती है।

इसके अलावा जैसा कि आप इस इकाई के प्रारम्भ में पढ़ चुके हैं, सार्वजनिक वितरण प्रणाली (Public distribution system) से भी खाद्यों का समान वितरण किया जाता है। इस प्रणाली के तहत गरीबी रेखा से नीचे के परिवारों को परिवारिक संख्या के आधार पर गेहूँ, चावल, आयोडीनीकृत नमक रियायती दामों पर उपलब्ध कराया जाता है।

3.4.4 खाद्य पदार्थों का अंतर-परिवारीय वितरण (Intra-familial distribution of food stuffs)

भारत में यह व्यापक रुप से माना जाता है कि परिवार में (मुख्य रुप से ग्रामीण गरीब वर्गों में) भोजन का वितरण परिवार के सदस्य की आवश्यकता पर आधारित नहीं होता है। भोजन का पहला हिस्सा कमाने वाले (breadwinner) यानि परिवार के मुखिया का, दूसरा हिस्सा बच्चों का होता है तथा आखिर में जो बचता है वह महिला के लिए होता है। इस प्रकार पारिवारिक असमान वितरण से सबसे ज्यादा महिलाएं प्रभावित होती हैं। लम्बे समय तक ऐसा होने से ही ज्यादातर परिवारों में महिलाओं की स्वास्थ्य स्थिति बड़ी ही नाजुक देखी गई है। महिलाओं के बाद बच्चों में भी खाद्य अपर्याप्ता की स्थिति देखी जाती है। परिवारिक आर्थिक तंगी के समय यह स्थिति और भी सोचनीय हो जाती है।

खाद्यों के अंतर-परिवारीय असमान वितरण से बचने के लिए पोषण सम्बन्धी शिक्षा व जागरुकता विभिन्न कार्यक्रमों द्वारा तो दी जाती है। साथ ही कुछ अन्य योजनाएँ भी हैं जो गरीब परिवारों को खाद्य पर्याप्त रुप से वितरित कर प्रत्येक सदस्य को खाद्य सुरक्षा प्रदान करती है जैसे-

- **अन्नपूर्णा योजना-** इस योजना के तहत निर्धन विकलांग बूढ़े व्यक्तियों के कम दामों पर खाद्य उपलब्ध करवाया जाता है।
- **अन्तयोद्य अन्न योजना-** इस योजना के अन्तर्गत गरीब परिवारों को प्रति महीने 2 रुपये प्रति किलो गेहूँ व 3 रुपये प्रतिकिलो चावल प्रदान किये जाते हैं।
- **सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना-** इस योजना के तहत मजदूरी रोजगार उपलब्ध कराया जाता है। इस रोजगार उपलब्धता में बेरोजगार गरीब ग्रामीणों, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजातियों तथा बाल-बच्चेदार स्त्री-पुरुषों को वरीयता दी जाती है। इस योजना के तहत व्यक्तियों को रोजाना दिनभर की मजदूरी के बराबर का अनाज दिया जाता है ताकि परिवार को कुछ हद तक खाद्य सुरक्षा प्रदान की जा सके।
- इसके अलावा आई0सी0डी0एस0 व मध्याह्न भोजन योजना के तहत विभिन्न पौष्टिक व्यन्जनों का वितरण बच्चों को आँगनबाड़ियों में कराया जाता है जिससे लक्षित समूह के बच्चों को पर्याप्त भोजन उपलब्ध सुनिश्चित होती है।

3.4.5 प्राकृतिक आपदाओं में भोजन प्रबंधन (Food management during natural calamities)

प्राकृतिक आपदाओं जैसे भूकम्प, बाढ़, सूखा आदि में खाद्य संकट चरम सीमा पर पहुँच जाता है क्योंकि क्षेत्र विशेष में न केवल जान-माल की हानि होती है बल्कि यातायात सुविधाएं भी ठप हो जाने के कारण जनसंख्या खाने व पानी के लिए भी तरस जाती है। अतः प्राकृतिक आपदाओं में खाद्य सुरक्षा होनी अनिवार्य है। ऐसे आकस्मिक खतरों से निबटने के लिए सरकार के पास एक निश्चित मात्रा में खाद्य भण्डार होता है। इसे ''बफर स्टॉक'' (Buffer Stock) कहा जाता है। इस भण्डार से प्रभावी क्षेत्र की जरुरतों को पूर्ण किया जाता है। पीड़ितों को खाद्य सुरक्षा देने के लिए विभिन्न कदम उठाए जाते हैं-

- बने बनाऐ खाद्यों (ready-to-eat foods) का वितरण करना। ये खाद्य राष्ट्र के बफर स्टॉक द्वारा उपलब्ध राशन द्वारा विकसित किये जाते हैं।
- कम मूल्य व उच्च पौष्टिक मूल्य वाले विभिन्न व्यन्जनों को खाद्य पैकेट (food packets) द्वारा वितरित कराना।
- उच्च स्तरीय स्वास्थ्य सेवाऐं प्रदान करना ताकि वातावरण जन्य संचरित रोगों व अन्य सम्बन्धित रोगों से बचा जा सके। विभिन्न सम्पूरक आहार सम्बन्धी कार्यक्रमों के सहयोग द्वारा पीड़ितों को स्वास्थ्य व पोषण सेवाएं प्रदान करना।
- राष्ट्र के राहत कोष (National relief fund) द्वारा विभिन्न आवश्यक सेवाओं, खाद्यों तथा स्वच्छ पेयजल आपूर्ति सम्बन्धी मदद करना।
- जल्द से जल्द स्थिति को सामान्य अवस्था में लाने के लिए विभिन्न राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं की वित्तीय, परामर्श सम्बन्धी व तकनीकी सहायता द्वारा कार्य करना।

बिहार में बाढ़ के दौरान खाद्य पैकेट वितरित करते सेना के जवान

3.4.6 पोषण पर निगरानी रखना (Nutritional Monitoring)

भारत में शहरी, ग्रामीण व आदिवासी आबादी में प्रतिव्यक्ति आय, क्रय शक्ति, भोजन की उपलब्धता, जीवन-शैली व पोषण स्तर में भारी अन्तर देखा जाता है। अतः नियमित अन्तराल पर सभी क्षेत्रों की स्थानीय पोषण स्थिति सम्बन्धी निगरानी की जाती है। इस निगरानी प्रक्रिया द्वारा न केवल उस स्थान की स्वास्थ्य स्थिति से सम्बन्धित विश्वस्नीय जानकारी व तथ्य प्राप्त होते हैं बल्कि उस स्थान विशेष में चल रहे विभिन्न पोषण व स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्यक्रमों के मूल्यांकन (evaluation) में भी मदद मिलती है। इसी मूल्यांकन के तहत इन कार्यक्रमों की सफलता व असफलता ज्ञात कर इनकी नीतियों व कार्य प्रणालियों में सुधारीकरण कर प्रक्रिया भी संभव हो पाती है।

3.4.7 अनुसंधान (Research)

भारत पोषण-अनुसन्धान के क्षेत्र में एशिया में ही नहीं पूरे विश्व में अग्रणी है। यहाँ अनेक अनुसन्धान संस्थान और विश्वविद्यालय लगातार पोषण सुधार सम्बन्धी अनुसन्धानों में लिप्त रहते हैं जैसे भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद् (Indian Council of Agricultural Research), भारतीय चिकित्सा अनुसन्धान परिषद् (Indian Council of Medical Research) वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसन्धान परिषद् (Council of Scientific and Industrial Research) जैव प्रौद्योगिकी विभाग (Department of Bio-Technology) आदि। यह सभी संस्थान व विभाग मुख्य रुप से देश की पोषण सम्बन्धी समस्याओं, उनके कारण, खतरे, जटिलताएं, उपचार, निवारण तथा रोकथाम आदि पर आधारित विभिन्न अध्ययन करते हैं। इन अध्ययनों व निष्कर्ष की मदद द्वारा विभिन्न प्रकार के खाद्य, दवाईयाँ, गोलियाँ, तकनीकों आदि का विकास करके उन्हें देश में चलने वाले अनेक पोषण सम्बन्धी कार्यक्रमों द्वारा पूरे देश की जनसंख्या को लाभान्वित किया जाता है। वर्तमान में चल रहे अनुसन्धान निम्न बिन्दुओं पर आधारित हैं-

- मुख्य पोषक तत्वों के प्रभावी स्रोत
- खाद्य संदूषण व खाद्य मिलावट की जाँच द्वारा खाद्य सुरक्षा
- भारतीयों की दैनिक पोषक तत्वों की आवश्यकताएं एवं दैनिक भोजन अन्तर्ग्रहण
- पोषण स्तर के जांच हेतु बेहतर व प्रभावी उपकरणों का विकास
- पोषण स्तर को निर्धारित करने वाले तत्वों की पहचान
- सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी जन्य विकार व उत्पन्न जटिलताएं
- खाद्य सम्बन्धी आदतों व जीवन-शैली का स्वास्थ्य पर पड़ने वाले विभिन्न प्रभाव
- वृद्वावस्था में पोषण
- वातावरणीय व अन्य प्रकार के संक्रमण
- विभिन्न बीमारियों में उपचारात्मक पोषण (Therapeutic Nutrition), पोषण प्रबंधन (Nutritional Management) तथा पोषण पुनर्वास (Nutritional rehabilitation)
- विभिन्न संक्रामक व गैर-संक्रामक रोगों के प्रतिरक्षा के लिए प्रभावी टीकों (vaccines) का विकास
- पोषण सम्बन्धी कार्यक्रमों के प्रभावों का रासायनिक जाँच द्वारा मूल्यांकन।

अभ्यास प्रश्न 2

1. रिक्त स्थान भरिए।
   a. निगरानी द्वारा विभिन्न पोषण व स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्यक्रमों के ..... में मदद मिलती है।

b. आपाकालीन स्थिति से निबटने हेतु सरकार के पास निश्चित मात्रा में खाद्य भण्डार होता है जिसे..... कहते हैं।

c. खाद्य पदार्थों के अन्तर्परिवारीय वितरण में असामानता के कारण सबसे ज्यादा .....की स्वास्थ्य स्थिति प्रभावित होती है।

2. कुपोषण प्रबंधन के लिए चलने वाले दो मुख्य पोषण सम्बन्धी कार्यक्रमों के नाम बताएं।

……

……..

3. अन्तर्परिवारीय खाद्य वितरण को सुधारने हेतु चलने वाली मुख्य योजनाओं के बारे में संक्षिप्त में लिखें।

……

……

…….

3.5 सारांश

खाद्य एवं पोषण सुरक्षा द्वारा प्रत्येक राष्ट्र को एक उपयोगी लक्ष्य प्राप्त होता है। यह पारिवारिक स्वास्थ्य, योजनाओं के क्रियान्वयन, नीतियों के निर्माण तथा कार्यक्रमों तथा परियोजनाओं के मूल्यांकन हेतु बहुमूल्य है। यह भोजन के अधिग्रहण, उपलब्धता एवं आवंटन सम्बन्धी व्यवहार में न केवल राष्ट्रीय बल्कि पारिवारिक स्तर पर भी सुधार लाने में सक्षम है। अगर इसके महत्व को समझते हुए प्रभावी तरीके से इसे प्रयोग में लाया जाए तो प्रत्येक राष्ट्र के पोषण सम्बन्धी कार्यक्रमों और नीतियों के विकासपूर्ण क्रियान्वयन में अप्रतिम सफलता हासिल हो सकती है। निश्चित ही इससे राष्ट्र का पोषण स्तर व स्वास्थ्य स्तर सुधरेगा तथा राष्ट्र प्रगति की ओर अग्रसर होगा।

3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1. रिक्त स्थान भरिए।
   a. पंच-वर्षीय
   b. घरेलू, सामुदायिक
2. 'खाद्य एवं पोषण सुरक्षा' की परिभाषा- एक सक्रिय, स्वास्थ्य जीवन के लिए हर समय सभी लोगों द्वारा पर्याप्त भोजन का उपभोग खाद्य एवं पोषण सुरक्षा है।
3. स्वतन्त्रता के बाद हमारे देश को पोषण सम्बन्धी दो प्रमुख समस्याओं का सामना करना पड़ा-
   i. कृषि उत्पादन व उचित भोजन वितरण प्रणाली की कमी के कारण अकाल (famine) का खतरा।

ii. गरीबी, क्रय शक्ति व स्वास्थ्य देखभाल में निम्न स्तर के कारण ऊर्जा की कमी जन्य विभिन्न स्वास्थ्य जटिलताएँ।

4. सामुदायिक स्तर पर खाद्य एवं पोषण सुरक्षा को प्राप्त करने के लिए विभिन्न कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है जैसे- आर्थिक व समाजिक रुप से पिछड़े वर्गों में निर्बाध रूप से खाद्यन्न आपूर्ति, विपरीत मौसमों में खाद्य आपूर्ति, स्वच्छ पेयजल आपूर्ति संकट, अज्ञानता, स्वास्थ्य की दृष्टि से संवेदनशील वर्गों की सहायता के लिए साधनों की कमी, सामुदायिक स्वास्थ्य देखभाल सेवाओं की कमी आदि।

अभ्यास प्रश्न 2

1. रिक्त स्थान भरिए।
   a. मूल्यांकन
   b. बफर स्टॉक
   c. महिलाओं
2. समेकित बाल विकास कार्यक्रम तथा मध्याह्न भोजन कार्यक्रम
3. अन्तर्परिवारीय खाद्य वितरण को सुधारने हेतु चलने वाली मुख्य योजनाएं इस प्रकार हैं-
   i. अन्नपूर्णा योजना- इस योजना के तहत निर्धन विकलांग बूढ़े व्यक्तियों के कम दामों पर खाद्य उपलब्ध करवाया जाता है।
   ii. अन्तयोद्य अन्न योजना- इस योजना के अन्तर्गत गरीब परिवारों को प्रति महीने 2 रुपये प्रति किलों गेहूँ व 3 रुपये प्रतिकिलो चावल प्रदान किये जाते हैं।
   iii. सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना- इस योजना के तहत मजदूरी रोजगार उपलब्ध कराया जाता है। इस रोजगार उपलब्धता में बेरोजगार गरीब ग्रामीणों, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजातियों तथा बाल-बच्चेदार स्त्री-पुरुषों को वरीयता दी जाती है। इस योजना के तहत व्यक्तियों को रोजाना दिनभर की मजदूरी के बराबर का आनाज दिया जाता है ताकि परिवार को कुछ हद तक खाद्य सुरक्षा प्रदान की जा सके।
   iv. इसके अलावा आई0सी0डी0एस0 व मध्याह्नन भोजन योजना के तहत विभिन्न पौष्टिक व्यन्जनों का वितरण बच्चों को आँगनबाड़ियों में कराया जाता है जिससे लक्षित समूह के बच्चों को पर्याप्त भोजन उपलब्ध सुनिश्चित होती है।

3.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची

इंटर्नेट स्रोत

1. www.planningcommission.nic.in
2. wwwf.ao.org
3. www.worlfoodscience.org
4. www.ifad.org

5. www.adb.org
6. www.chronicproverty.org
7. www.ifpri.org
8. www.insaindia.org
9. www.foodsec.org
10. www.lawisgreek.comfèood-security-nutrition
11. www.nutritioncoalition.in
12. www.springerlink.com
13. htp.solutionexchange.net.in
14. www.google.com

इकाई 4: सामुदायिक स्वास्थ्य के लिए पोषण सम्बन्धी कारक

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 शारीरिक कारक
  4.3.1 व्यक्तित्व
  4.3.2 जीवन शैली
  4.3.3 आदतें
  4.3.4 आनुवांशिकता
  4.3.5 मानसिक स्थिति
  4.3.6 पोषण सम्बन्धी विसंगतियाँ व अन्य अपक्षयी रोग
4.4 सामाजिक कारक
  4.4.1 समाजिक प्रथाएँ/कुरीतियाँ
  4.4.2 खाद्य आपूर्ति एवं पर्याप्तता
  4.4.3 मातृशिशु स्वास्थ्य एवं परिवार नियोजन
  4.4.4 निर्धनता
  4.4.5 शैक्षिक स्तर
  4.4.6 अस्वच्छता तथा अज्ञानता
  4.4.7 टीकाकरण व संक्रमण
  4.4.8 स्थानीय रोग
4.5 सांस्कृतिक कारक
  4.5.1 रीति-रिवाज
  4.5.2 खाद्य मिथक
4.6 सारांश
4.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

4.1 प्रस्तावना

पिछली इकाईयों में आप सामुदायिक पोषण से सम्बन्धित अनेक समस्याओं और उनके निवारण के लिए चल रहे विभिन्न सरकारी कार्यक्रमों के बारे में विस्तार-पूर्वक पढ़ चुके हैं। इस इकाई में आप सामुदायिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले ऐसे कारकों के बारे में पढ़ेंगे, जो पोषण से सम्बन्धित हैं। यह कारक समुदाय की सोच, गतिविधियों एवं प्रचलन का फल हैं। इन्हें मुख्य रूप से तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता हैः शारीरिक कारक, सामाजिक कारक व सांस्कृतिक कारक। यह अलग-अलग प्रकार से सामुदायिक स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़कर आप सामुदायिक स्वास्थ्य के लिए पोषण सम्बन्धी निम्न कारकों को जानेंगेः

- शारीरिक कारक जैसे व्यक्तित्व, जीवन शैली, आनुवांशिकता, मानसिक स्थिति, पोषण सम्बन्धी विसंगतियाँ व अन्य अपक्षयी रोग।
- सामाजिक कारक जैसे सामाजिक प्रथाएं/कुरीतियाँ, खाद्य आपूर्ति एवं पर्याप्तता, मातृशिशु स्वास्थ्य एवं परिवार नियोजन, निर्धनता, शैक्षिक स्तर, अस्वच्छता तथा अज्ञानता, टीकाकरण व संक्रमण, स्थानीय रोग।
- सांस्कृतिक कारक जैसे रीति-रिवाज, खाद्य मिथक।

आइऐ, इन कारकों को विस्तार से जानें।

4.3 शारीरिक कारक (Physical Factors)

शारीरिक कारक सामुदायिक पोषण को अनेक तरह से प्रभावित करते हैं। शारीरिक कारक से तात्पर्य उन कारकों से है जो पूर्ण रूप से व्यक्तिगत होते हैं। यह कारक व्यक्ति के स्वभाव, आदतों आदि की देन होते हैं। अतः इनके लिए व्यक्ति पूर्णतः स्वयं ही उत्तरदायी होता है। शारीरिक कारकों में अनेक प्रकार की भिन्नता पाई जाती है। कुछ विशिष्ट शारीरिक कारकों का उल्लेख निम्न प्रकार से हैः

4.3.1 व्यक्तित्व

किसी भी व्यक्ति का व्यक्तित्व उसकी भावनात्मक प्रतिक्रिया और व्यवहार को प्रदर्शित करने के तरीके का संयोजन है, दूसरे शब्दों में व्यक्तित्व रोजमर्रा के तनावों से निपटने की कला है। मुख्यतः व्यक्तित्व दो तरह के होते है:

टाइप 'ए' व्यक्तित्व (Type "A" Personality): इस व्यक्तित्व के स्वामी बेहद अधीर, जल्दबाजी में रहने वाले, छोटी-छोटी बातों में तनावग्रस्त होकर अवसादग्रस्त होने वाले, आक्रामक, अत्यधिक दबाव में रहने वाले होते हैं।

ऐसे व्यक्तियों में ज्यादातर मानसिक अस्थिरता (mental instability) देखी जाती है, जिससे उनके खाने-पीने पर विभिन्न प्रभाव देखे जाते हैं, जैसे:

- जल्दीबाज़ी में खाने से भोजन को पूर्णतः न चबा पाना, जिससे अपच हो सकती है।
- तनावग्रस्त होने पर शराब, धूम्रपान आदि का सहारा लेना।
- आक्रामकता आमाशयिक रस (gastric juice) के स्त्राव को बढ़ाती है, जिससे पेप्टिक अल्सर होने की संभावना होती है।
- ऐस व्यक्ति अत्यधिक काम करने की वजह से पूर्ण आराम नहीं कर पाते, जिससे स्वास्थ्य स्तर गिर जाता है।
- समय की कमी के कारण व्यायाम भी नहीं हो पाता।
- इन सभी के कारण या तो व्यक्ति अत्यधिक मोटा हो जाता है या विभिन्न पोषक तत्वों की कमी जन्य विकारों से ग्रस्त हो जाता है।

टाइप 'बी' व्यक्तित्व (Type "B" Personality): ऐसे व्यक्तित्व वाले व्यक्ति शान्त, जीवन की गुणवत्ता पर ध्यान केन्द्रित करने वाले, धीरजपूर्ण व सरल स्वभाव के होते हैं। मानसिक रूप से स्थिर होने की वजह से यह व्यक्तित्व व्यक्ति को प्रसन्नचित व शान्त बनाता है।

4.3.2 जीवन शैली (Life style)

जीवन शैली से तात्पर्य किसी भी व्यक्ति के जीवन जीने के तरीके से है। जीवन शैली में तो तमाम क्रियाकलाप आते हैं, जो व्यक्ति अपने दिन भर में करता है। इन क्रियाकलापों का स्वरूप ही व्यक्ति के ऊर्जा सन्तुलन को निर्धारित करता है। ऊर्जा सन्तुलन से यहाँ हमारा तात्पर्य ऊर्जा अंतर्ग्रहण (energy intake) तथा ऊर्जा के व्यय (energy expenditure) से है। आदर्श स्थिति वह मानी जाती है जिसमें ऊर्जा का अंतर्ग्रहण ऊर्जा के व्यय के बराबर हो। परन्तु यदि ऐसा न हो तो उसे ऊर्जा असन्तुलन कहते हैं। यदि आप अधिक भोजन खाते हैं (यानि कि अधिक ऊर्जा अंतर्ग्रहण करते हैं) तथा काम कम करते हैं (यानि कि ऊर्जा कम व्यय होती है) तो आपके शरीर में ऊर्जा का असन्तुलन हो जाएगा । शहरी क्षेत्रों में समृद्ध व्यक्तियों की जीवनशैली अक्सर अल्पश्रमिक होती है। वे अपना अधिकांश समय दिमागी कार्यों में बिताते हैं तथा दौड़-भाग और चलने-फिरने जैसे काम कम ही करते हैं। गृहिणियों के पास काम आसान करने के लिए विभिन्न उपकरण व मशीनें आदि उपलब्ध होते हैं। ऐसे लोग आहार के रूप में खाई गई कैलोरी का बहुत थोड़ा-सा अंश ही व्यय करते हैं। इसके कारण ऊर्जा में असन्तुलन आ जाता है व वजन में वृद्धि हो जाती है।

इसके विपरीत यदि आप अधिक काम करते हैं किन्तु कम भोजन खाते हैं, तो भी ऊर्जा असन्तुलन हो जाता है। वे लोग जो अत्यधिक क्रियाशील रहते हैं जैसे मजदूर, दौड़भाग करने वाले व्यक्ति, किसान आदि अगर अल्प भोजन करें तो शरीर में ऊर्जा की कमी के कारण वजन में भी कमी आ जायेगी। लम्बे समय तक यह स्थिति रहने पर अनेक पोषण की कमी जन्य विकारों

के होने का खतरा बढ़ जाता है। अतः क्रियाकलापों का स्वरूप व्यक्ति के पोषण को प्रभावित करके उसे दुबला, मोटा या सामान्य वजन प्रदान करने के लिए उत्तरदायी माना जाता है।

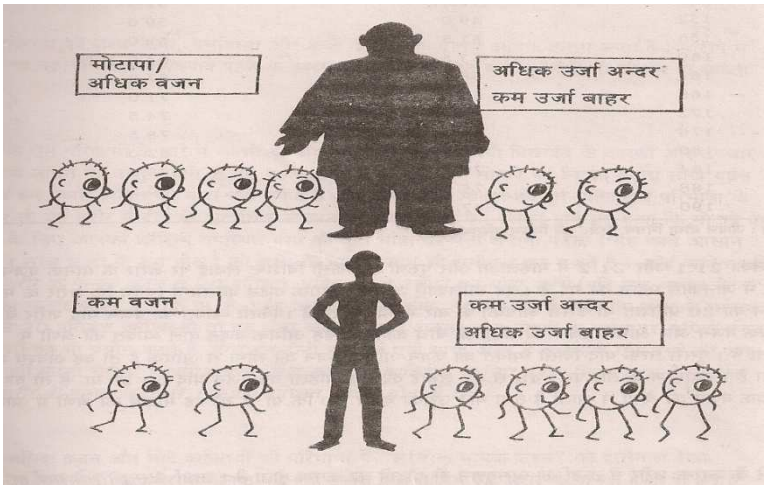

ऊर्जा में असन्तुलन

4.3.3 आदतें (Habits)

स्वास्थ्य को ठीक रखने में आदतें एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं। ये सही जानकारियों और सूचनाओं पर आधारित होनी चाहिए और इन्हें नियमित अभ्यास से विकसित किया जाना चाहिए। जब एक आदत पड़ जाती है तो वह हमारे स्वभाव का अंग बन जाती है और हम उस काम को सरलतापूर्वक कर लेते हैं। उपयुक्त अच्छी आदतें स्वस्थ्य एवं उपयोगी जीवन की नींव होती है।

कुछ क्रियायें जो कि आदतों के अन्तर्गत आती हैं, जो सीधे एवं बहुत महत्वपूर्ण रूप से स्वास्थ्य को प्रभावित करती है, नीचे दी गई हैं:

खान-पान की आदतें (Food habits): हम किस प्रकार का खाना खाते हैं? कौन सा पेय हमें अच्छा लगता है? इस सब की आदतें बहुत पहले बाल्यावस्था में ही पड़ जाती है। माता-पिता का इनके प्रति रवैया (attitude) तथा घर का वातावरण इस मामले में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। अनुकूलतम विकास, स्वास्थ्य तथा शारीरिक व मानसिक कार्य के अनुकूलतम उत्पादन में सहायक पौष्टिक भोजन का चयन करने के लिए प्रारम्भ में ध्यान दे कर प्रयास करना पड़ता है, परन्तु बाद में वह स्वाभाविक बन जाता है व अन्ततः उसकी आदत पड़ जाती है। कच्ची व पकी सब्जियों, अन्य पौष्टिक आहारों तथा पेय पदार्थों में अच्छे लगने की आदत बहुत कम आयु में ही डाली जाती है। आहार की केवल गुणवत्ता ही महत्वपूर्ण नहीं है, उसकी मात्रा की महत्वपूर्ण है। आवश्यकता से अधिक खाना या अतिभोजन (पेटूपन) एक आदत बन सकता है। बिना किसी शारीरिक व मानसिक कारण के अधिक भोजन करना भूखे रहने की अपेक्षा सरल है। प्रतिदिन की आहार पद्धति भी महत्वपूर्ण है- दिन में कितनी बार आप भोजन करते हैं

तथा हर बार किस प्रकार का भोजन खाते हैं। आप किस प्रकार अपना भोजन तैयार कराना पसन्द करेंगे। यह भी महत्वपूर्ण है, परन्तु यह बहुत हद तक आपकी आदत पर निर्भर करता है जो कि आपके परिवार में भोजन तैयार करने के तरीके पर आधारित होती है। भोजन में विद्यमान पौष्टिक तत्वों की शरीर के लिए उपलब्धता बहुत हद तक अन्य बातों के साथ-साथ भोजन पकाने या तैयार करने के तरीके पर निर्भर करती है। कुछ लोग चावल को खूब सारे पानी में पकाना पसंद करते हैं, परन्तु चावल पकने के बाद अतिरिक्त पानी फेंक देते हैं, जिसके साथ उसमें विद्यमान सारा थायमीन भी बह जाता है, कुछ लोग सब्जी को इतना पकाते हैं कि उसका गूदा बन जाता है, जिससे कि न केवल उसकी शक्ल, रंग तथा बनावट ही बिगड़ जाती है, बल्कि उसमें विद्यमान विटामिन 'सी' भी नष्ट हो जाता है, सब्जियों को छीलने के बाद धोने की आदत से सभी पानी में घुलनशील विटामिन भी पानी के साथ बह जाते हैं, कुछ लोग रोटी बनाते समय आटे को इतनी महीन छलनी से छानते हैं कि उसमें मौजूद शरीर के लिए अत्यावश्यक लगभग सारा चोकर/रेशा (husk fiber) ही छनकर निकल जाता है। भोजन से तुरन्त पहले मिठाई या चॉकलेट खाने से भूख समाप्त हो जाती है। पेय जल शरीर के लिए आवश्यक है, विशेष रूप से गर्मी के मौसम में व्यक्ति को पेयजल पीने की आदत होनी चाहिए। उसे हर समय केवल मधुरित (sweetened) या कोर्बोनेटीकृत (carbonated) पेय नहीं पीते रहना चाहिए जो कि भूख मारते हैं तथा आमाशय में अम्ल की मात्रा को बढ़ाते है। आहार पद्धति व्यक्ति के भोजन की मात्रा व गुणवत्ता दोनों को ही प्रभावित करके स्वास्थ्य स्थिति निर्धारित करती है।

धूम्रपान (Smoking): धूम्रपान स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है तथा शीघ्र ही आदत बन जाता है। एक बार इसकी आदत पड़ गई तो इसे छोडना असम्भव न होने पर भी बहुत कठिन हो जाता है। धूम्रपान न करने का सबसे सरल तरीका है उसे शुरू ही न करना। धूम्रपान से पाचन क्रिया को क्षति पहुँचती है, गले में खराश तथा खाँसी व घरघराहट होती है। धूम्रपान न करने वालों की तुलना में धूम्रपान करने वालो की फेफड़ों के कैंसर से मरने की संभावना दस से सोलह गुना अधिक रहती है। इसी प्रकार का सम्बन्ध धूम्रपान करने व न करने वालों के बीच, हदय रोगों व फेफड़ों की बीमारियों के लिए भी रहता है। धूम्रपान का एक संभव, परन्तु बहुत कम होने वाला प्रभाव- जो कि बरजरस (Buerjer's) के नाम से जाने वाले विशेष प्रकार के घातक परिसंचारी रोग के लक्षणों में वृद्धि है। रोग निकोटीन के विभिन्न प्रतिकूल प्रभावों में से एक प्रभाव त्वचा के तापमान को कम करने का है। केवल एक सिगरेट पीने से, उँगलियों तथा पंजों का तापमान 15 फैरनहाइट तक गिर जाता सकता है परन्तु औसतन तापमान में 5 डिग्री गिरावट आती है। तापमान में परिवर्तन अग्रांग (extremities) पर रक्त वाहिकाओं के सकीर्ण हो जाने के कारण आता है। इसके परिणामस्वरूप संकीर्ण हो गई रक्त वाहिकाओं में रक्त के थक्के बन कर उस क्षेत्र के ऊतकों में रक्त का प्रवाह रोक सकते हैं और इससे शरीर के अंग में सुन्नता या दर्द हो सकता है। यदि इसका तुरन्त उपचार न किया जाये तो इससे गम्भीर परिणाम हो सकते हैं। धूम्रपान का एक अन्य प्रभाव रक्त मे कार्बन मोनोऑक्साइड एकत्रित होने का होता है। कार्बन

मोनोऑक्साइड एक घातक गैस है। यह लाल रक्त कोशिकाओं (red blood cells) के रसायन में स्थाई रूप से मिल जाती है और परिणामस्वरूप वह शरीर के ऊतकों को ऑक्सीजन पहुँचाने के अपने सामान्य कार्य को करने में असमर्थ रहते हैं। इस प्रकार से रक्त के कुछ लाल कोशिकाओं की ऑक्सीजन पहुँचा पाने की क्षमता समाप्त हो जाने से मस्तिष्क की कोशिकाओं व अन्य ऊतकों को ऑक्सीजन की कमी महसूस होने लगती है। कुछ समय तक धूम्रपान बन्द करने से रूधिर की ऑक्सीजन पहुँचाने की क्षमता सामान्य हो सकती है। ऐसे परिवारों में जहाँ माता-पिता में से दोनों या एक धूम्रपान करता है, वहाँ बच्चे वयस्क होने पर धूम्रपान करने में संकोच नहीं करते। माता या पिता जो स्वयं धूम्रपान करता है वह निश्चित रूप से इसके लिये अपने बच्चे को मना नहीं कर पाएगा। शायद कुछ मामलों में उनको समझा कर वे यह दिखा कर कि इसे छोड़ पाना कितना कठिन है तथा स्वास्थ्य पर इसका कितना खराब असर पडता है, उन्हें इससे दूर रख सके अन्यथा यह बहुत कठिन है। माता-पिता तथा समाज द्वारा बच्चे को यह समझाने का हर संभव प्रयास किया जाना चाहिए कि धूम्रपान स्वास्थ्य के लिए कितना हानिकारक है तथा उन्हें इसे शुरू ही नहीं करने देना चाहिए।

शराब व नशा (Alcohol and drugs): शराब एक अवसादक (depressant) तथा निश्चेतक (drowsiness) है। यह मस्तिष्क तथ तन्त्रिका तन्त्र को प्रभावित करता है। शराब का शरीर व मस्तिष्क पर पड़ने वाला प्रभाव कई कारणों से भिन्न-भिन्न होता है। इनमें से प्रमुख कारण है, ली गई शराब की मात्रा तथा मस्तिष्क तक पहुँचते समय रक्त में विद्यमान अल्कोहल (alcohol) का प्रतिशत। जैसे-जैसे यह प्रतिशत बढ़ता जाता है, मस्तिष्क तथा केन्द्रीय तंत्रिका तन्त्र का कार्य अधिकाधिक प्रभावित होता जाता है। मानसिक क्षमताएँ कम हो जाती हैं और मदहोशी के शारीरिक लक्षण प्रकट होने लगते हैं।

आइए, जानते हैं कि शराब का शरीर में क्या होता है? शराब या अल्कोहल चीनी के सामान एक ऊर्जा उत्पादक आहार है। एक ग्राम अल्कोहल 7 किलोकैलोरी ऊर्जा प्रदान करता है परन्तु इसकी पौष्टिकता न के बराबर होती है क्योंकि इसमें ऊर्जा के अलावा कोई अन्य पोष्क तत्व नहीं होता। जो लोग लम्बे समय या अत्याधिक मद्यपान करते हैं वे अनेक पोषण जन्य कमियों का शिकार होकर मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं। अल्कोहल अन्य आहारों के विपरीत अमाशय तथा छोटी आंतो के माध्यम से शीध्रता से रक्त प्रवाह में अवशोषित हो जाता है, क्योंकि इसको पचाने की आवश्यकता नहीं होती है। उसके बाद यह यकृत (liver) में ले जाया जाता है जहाँ कि सारा ही अल्कोहल ऊष्मा व ऊर्जा में परिवर्तित हो जाता है। बाकी बचा हुआ अल्कोहल हृदय द्वारा फेफड़ों में भेज दिया जाता है। जिससे यह श्वास तथा कुछ मूत्र व पसीने द्वारा निष्कासित हो जाता है। अतः इसमें उपस्थित सभी हानिकारक तत्व पूरे शरीर में फैल कर मस्तिष्क में संचरित हो जाते हैं।

अत्यधिक शराब पीने वाले व नशा जैसे तम्बाकू आदि लेने वाले व्यक्तियों की आवाज फटी-फटी हो जाती है तथा पौष्टिक अल्सर, गुर्दे तथा यकृत के संक्रमण तथा मूर्च्छा रोग भी हो सकता

है। अतः शराब व नशे का अत्याधिक सेवन न केवल पोषण स्तर को नुकसान पहुँचाता है बल्कि अत्यन्त खतरनाक बीमारियों को बढ़ावा देकर मृत्यु की सम्भावना को भी बढ़ाता है।

4.3.4 आनुवांशिकता (Heredity)

आनुवांशिकता से तात्पर्य उन सभी गुणों से है जो कि प्रत्येक माता-पिता अपनी संतानों को हस्तानान्तरित करते हैं। ये गुण न केवल संतानों के स्वभाव, बौद्विक स्तर को निर्धारित करते हैं बल्कि शारीरिक स्वास्थ्य का भी ढाँचा तैयार करते हैं। अनेक प्रकार के रोग जैसे हृदय रोग, मधुमेह आदि एक पीढ़ी से दूसरी में स्थानान्तरित होते रहते हैं। उदाहरण के तौर पर एक अनुसंधान से यह पता चला है कि यदि माता-पिता दोनों का वजन सामान्य है, तब उनके बच्चों के मोटे होने की सम्भावना केवल 7 प्रतिशत ही है, परन्तु यदि माता-पिता मे से कोई एक मोटा हो तो बच्चों के मोटे होने की सम्भावना 40 प्रतिशत तथा माता-पिता दोनो के मोटे होने पर यह सम्भावना 80 प्रतिशत तक हो जाती है।

इसी तरह कई प्रकार के संक्रमण व एलर्जी भी आनुवांशिक होते हैं जैसे विभिन्न चर्म रोग, दुग्ध एलर्जी, गेंहू की एलर्जी आदि। ये सभी आनुवांशिक कारक व्यक्ति में भोजन के अंतर्ग्रहण पर असर डालकर पोषण स्तर को प्रभावित करते हैं।

4.3.5 मानसिक स्थिति (Mental Status)

किसी भी व्यक्ति की मानसिक स्थिति भी उसके पोषण को प्रभावित कर सकती है। एक स्वस्थ मानसिक स्थिति यानि सुखी, प्रसन्नचित्त अवस्था सामान्य भूख प्रदान करती है। इस स्थिति में व्यक्ति भोजन मन से खाता है तथा उसका पाचन, अवशोषण आदि भी ठीक प्रकार से होता है। परन्तु इसकी विपरीत स्थिति पोषण स्तर को खराब कर देती है। कुछ लोग घबराहट, ऊबने पर या फिर अकेलापन महसूस करने पर और अधिक भोजन खाते हैं। ऐसी हालत में उनका सारा ध्यान भोजन पर ही केन्द्रित होता है तथा वही उनकी घबराहट तथा ऊब को कम कर पाता है। ऐसे लोगो का बजन बढ़ने और मोटे होने की प्रवृत्ति होती है।

विपरीत मनः स्थिति भी पोषण पर असर डालती है जैसे अत्यधिक चिन्ताग्रस्त रहना, किसी व्यवसाय अथवा नौकरी आदि की वजह से हमेशा तनाव में रहना, बच्चों में परीक्षा और कैरियर की चिन्ता आदि से अक्सर भूख न लगना जैसे परेशानियाँ सामने आती हैं। तनाव की स्थिति लम्बे समय तक रहने से पैप्टिक अल्सर भी हो सकता है। इससे भी पोषण स्तर का ह्रास होता है।

4.3.6 पोषण सम्बन्धी विसंगतियाँ व अन्य अपक्षयी रोग (Nutrition related anomalies and other degenerative diseases)

पोषण सम्बन्धी विसंगतियों से तात्पर्य उन रोगों से है जो पूर्ण रुप से पोषण से सम्बन्धित हैं। विभिन्न पोषक तत्वों की कमी से होने वाले रोगों के बारे में आप विस्तारपूर्वक पिछली इकाईयों के पढ़ चुके हैं। अतः आपको यह ज्ञात हो गया होगा कि हर विसंगति में भिन्न-भिन्न प्रकार के

शारीरिक संरचनात्मक या कार्यात्मक परिवर्तन होते हैं जैसे अतिसार, ज्वर, आमाशयिक संक्रमण, यकृत संक्रमण आदि। इन सभी परिवर्तनों में रोगी की भूख व पाचन-अवशोषण प्रक्रिया क्षीर्ण हो जाती है। इसके अलावा अनेक जटिलताओं के कारण व्यक्ति का पोषण प्रभावित हो जाता है।

इसी तरह अपक्षयी रोग भी अत्यन्त खतरनाक होते हैं। ये ऐसे रोग है जो अनेक कारणों जैसे अनुवांशिकता, अतिपोषण, अन्य शरीरिक विकारों द्वारा हो जाते हैं। सामन्यतः यह रोग जीवनपर्यन्त रहते हैं तथा धीरे-धीरे रोग शरीर का क्षय करते रहते हैं जैसे हृदय रोग, मधुमेह, कैन्सर आदि। इस प्रकार के रोगो में व्यक्ति आहार सम्बन्धी प्रतिबन्ध, रोग सम्बन्धी प्रतिबन्ध व रोग सम्बन्धी अवसाद के कारण सम्पूर्ण पोषण नहीं ले पाता। अतः किसी व्यक्ति विशेष की स्वास्थ्य स्थिति भी पोषण को प्रभावित करने में सक्षम है।

अभ्यास प्रश्न 1

1. सही मिलान करें।

अ) टाइप 'ए' व्यक्तित्व	i. अवसादक तथा निश्चेतक
ब) धूम्रपान	ii. मोटापा
स) शराब	iii. आक्रामकता
द) अल्पश्रमिक जीवन शैली	iv.कार्बन मोनॉक्साइड

2. 1 ग्राम अल्कोहल से ..... किलो कैलोरी ऊर्जा प्राप्त होती है।
3. ऊर्जा सन्तुलन से तात्पर्य ..... व ऊर्जा ..... से है।
4. आटे को महीन छलनी से छानने पर उसमें मौजूद ..... निकल जाता है।
5. माता-पिता के गुणों का उनकी सन्तानों को हस्तान्तरित होना ..... कहलाता है।

4.4 सामाजिक कारक (Social Factors)

हम जिस वातावरण में रहते है, उसे समाज कहते हैं। हमारा हर क्रियाकलाप व सोच इस समाज से प्रभावित होती है। समाज की विभिन्न संस्थाओं से हमारे जीवन का हर पहलू जुड़ा होता है चाहे वह शिक्षा हो नौकरी या व्यवसाय हो, स्वच्छ पेयजल व्यवस्था हो, खान-पान का तरीका हो सभी कुछ हमारे समाजिक वातावरण पर निर्भर करता है।

पोषण को प्रभावित करने वाले विभिन्न समाजिक कारकों का विवरण निम्न प्रकार से किया जा सकता है-

4.4.1 समाजिक प्रथाएँ/कुरीतियाँ (Social Practices)

भारतीय समाज में कुछ प्रथाएँ/कुरीतियाँ दीमक की तरह एक बड़ी आबादी के पोषण को प्रभावित करती है। उदाहरणार्थः

बाल विवाह (Child Marriage): बाल विवाह द्वारा छोटी- छोटी बालिकाओं को दायित्वों के भार तले लाद दिया जाता है। इसके कारण बचपन में ही तनाव व डर से बालिकाओं का पोषण स्तर गिर जाता है। कई मामलों में कच्ची उम्र में ही गर्भावस्था द्वारा मातृ-मृत्यु भी देखी गई है। पर्याप्त पोषण की कमी व अपरिपक्व अवस्था में गर्भवती होना विभिन्न रोगों को बढ़ावा देता है।

गर्भपात (Abortions): आज के दौर में भी हमारे समाज में लिंग-भेद किये जाने की समस्या बेहद ही शर्मनाक है। गर्भवस्था के दौरान लिंग परीक्षण द्वारा लिंग जाँच करके कई स्त्रियाँ ससुराल पक्ष के दबाव में लड़के की चाह में बार-बार गर्भपात कराती हैं जिससे उनका स्वास्थ्य और भी खराब हो जाता है।

स्त्री का सामज में निम्न दर्जा (Low Status of Women in Society): ज्यादातर परिवारों में पुरुष प्रधानता की वजह से स्त्रियों को निम्न दर्जा दिया जाता है। शिक्षा व अज्ञानता के कारण स्त्रियाँ भी इसी प्रचलन पर चलते हुए निम्न व अपर्याप्त पोषण का शिकार हो जाती हैं।

बाल-श्रम (Child Labour): बाल-श्रम भी हमारे देश में बहुतायत में देखने को मिलता है। अत्याधिक गरीबी छोटे-छोटे बच्चों को काम करने को मजबूर कर देती है। कुछ माता-पिता धन कमाने के लालच में भी अपने बालकों को बाल-श्रम के लिए प्रेरित करते हैं। इससे बच्चे बढ़ती उम्र में अत्याधिक कार्यभार व कार्यशीलता एवं अपर्याप्त भोजन की वजह से बचपन से ही अनेकों बीमारियों से घिर जाते है।

भारतीय समाज में बाल-श्रम के विभिन्न स्वरूप

4.4.2 खाद्य आपूर्ति एवं पर्याप्तता (Food Supply & adequacy)

भारत में विविध प्रकार की जलवायु पाई जाती है। कुछ क्षेत्रों में वर्षा अधिक है तो कहीं सूखा है वहीं कुछ स्थानों का तापमान काफी गर्म तो कहीं काफी ठण्डा है। जलवायु की तरह प्रत्येक क्षेत्र की भौगोलिक स्थितियाँ भी भिन्न-भिन्न हैं जैसे पहाड़, पठार, रेगिस्तान आदि। इन्हीं सभी विविधताओं के कारण खेती भी काफी हद तक प्रभावित होती है। बहुत से क्षेत्रों में उपयुक्त जलवायु व मौसम न होने की वजह से कई प्रकार की फसलों को बोया जाना असम्भव हो जाता है। फलतः वहाँ की जनसंख्या को अपना मुख्य आहार उपलब्ध फसल को ही बनाना पड़ता है। आधुनिकीकरण के कारण बढ़ती यातायात सुविधाओं ने कुछ हद तक इस समस्या का समाधान तो किया है परन्तु छोटी-छोटी बस्तियों व पहाड़ी इलाकों में अभी खाद्य आपूर्ति के संकट से जूझना पड़ता है क्योंकि स्थानीय फसल जनसंख्या के लिए अपर्याप्त होती है। प्राकृतिक आपदा प्रवण क्षेत्रों (Natural calamities prone areas) में तो खाद्य आपूर्ति संकट अक्सर ही बना रहाता है क्योंकि विपदा के समय यातायात सुविधाएं भी पूर्ण रुप से बाधित हो जाती हैं।

भौगोलिक स्थितियों के कारण कई बार स्थानीय फसल भी पोषण को प्रभावित करती है। आयोडीन की कमी इसका अच्छा उदाहरण है। जैसा कि आप पिछली इकाइयों में पढ़ चुके हैं कि नमक के अलावा हमें सब्जियों व पानी से भी आयोडीन प्राप्त होता है। पहाड़ी क्षेत्रों की मिट्टी में आयोडीन की कमी होने के कारण सब्जियों में भी इसकी न्यूनता देखी जाती है। फलतः इन

इलाकों में घेंघा (goitre) काफी मात्रा में देखा जाता है। अतः सामुदायिक स्वास्थ्य खाद्य आपूर्ति व पर्याप्तता से काफी हद तक प्रभावित होता है।

4.4.3 मातृशिशु स्वास्थ्य एवं परिवार नियोजन (Maternal child healthcare and family planning)

हम पढ़ चुके हैं कि जनसंख्या के कुछ वर्ग बेहद संवेदनशील होते हैं जैसे गर्भवती व धात्री माता, शिशु। अगर स्वास्थ्य स्तर खराब रहता है तो इसके कुपोषित होने की सम्भावना रहती है।

मातृ स्वास्थ्य: भारतवर्ष में मातृ स्वास्थ्य सम्बन्धी अनेक स्थितियाँ है जो कुपोषण को बढ़ावा देती हैं। आइए इन स्थितियों पर कुछ विस्तार से चर्चा करें-

- **बार-बार गर्भवती होना-** एक औसत भारतीय महिला (विशेषतया ग्रामीण क्षेत्रों में) कई बार गर्भावस्था तथा स्तन्यकाल (lactation) के दौर से गुजरती है। इस प्रकार बार-बार गर्भवती होने से माँ तथा बच्चे के स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता है। इन महिलाओं को एनीमिया भी अधिक होता है। जो बच्चे, इन अनेकों बार गर्भवती होने वाली महिलाओं से पैदा होते है, उनके जन्म के समय अल्प वजन होने की भी संभावना होती है।
- **बार-बार संक्रमण होना-** गर्भावस्था के दौरान संक्रमण की सम्भावना भी बहुत अधिक होती है। वास्तव में गर्भवती महिला को मूत्र तन्त्र सम्बन्धी संक्रमण होने की अधिक सम्भावना होती है। इन्हें दस्त, मलेरिया तथा यकृत संक्रमण भी हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त अगर एनीमिया भी हो तो संक्रमणों का खतरा बढ़ जाता है। संक्रमणों से भ्रूण का विकास कम होता है तथा इससे मृत जन्म (still birth) या बच्चे का अल्प वजन हो सकता है। इससे माँ भी बहुत कमजोर हो जाती है।
- **अधिक कार्यभार या श्रम-** भारतीय महिलाएं गर्भावस्था के दौरान भी घरेलू कामकाज के अतिरिक्त खेतीबाड़ी के कामों में भी हाथ बंटाती है। गरीबी के कारण निम्न आय वर्ग की महिलाएं मजदूरी करती हैं। आपको यह भी पता होगा कि दूर-दराज के ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं को पानी तर्था इंधन लाने के लिए काफी दूरी तय करनी पड़ती है। इस प्रकार ऐसी महिलाओं को अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है चूंकि ये महिलाएं अपर्याप्त आहार पर निर्भर रहती हैं, गर्भावस्था के दौरान इनका वजन कम बढ़ता है तथा उनके बच्चे भी छोटे होते हैं।
- **शराब पीना व धूम्रपान करना-** धूम्रपान करने और शराब पीने का भ्रूण पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है विशेषकर बच्चे के वजन पर धूम्रपान करने वाली महिलाओं के जन्म के समय अल्प वजन बच्चे, धूम्रपान न करने वाली महिलाओं की तुलना में दोगुने होते हैं। यदि ये धूम्रपान के साथ-साथ शराब का भी सेवन करती है तो अल्पवजन बच्चे पैदा होने की सम्भवना और अधिक बढ़ जाती है।
- **मातृक कुपोषण-** माँ का पोषण स्तर नवजात शिशु के पोषण स्तर की स्थिति को सुनिश्चित करता है। यदि माता का पोषण स्तर घटिया हो तो बच्चे के कुपोषित होने की सम्भावना

अधिक रहती है। मातृक कुपोषण होने पर बच्चे के जन्म के समय भार कम हो जाता है और आमतौर से बच्चे के जीवन की शुरुआत विकलांगता से होती है। एक सामान्य भारतीय बच्चे का जन्म-भार लगभग 2.5-3 किलोग्राम होता है। अतः 2.5 किलोग्राम से कम जन्म भार वाले शिशु को कम जन्म भार वाला शिशु (low birth weight baby) कहते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों के निर्धन वर्गों में प्रति 100 बच्चों में 30-35 का जन्म भार सामान्य जन्म भार से कम होता है। अतः कम जन्म भार प्रोटीन ऊर्जा जो मूल रुप से मातृक कुपोषण से होता है।

शिशु स्वास्थ्य: शिशु का मुख्य आहार माँ का दूध ही होता है परन्तु जैसे जैसे शिशु बड़ा होता है उसकी शारीरिक आवश्यकताएं भी बढ़ती जाती हैं। अतः 6 माह से हम उसे पूरक आहार (supplementary food) देना शुरु कर देते हैं। कई परिवारों में अज्ञानतावश यह बहुत देर से शुरु कराया जाता है फलतः शिशु कुपोषित हो जाता है। कुछ मामलों में यह भी देखा गया है कि पूरक आहार के लिए परिवार में कोई विशेष आहार न बनाकर व्यस्कों को दिये जाने वाले अनाज ही प्रायः बच्चों को दिये जाते हैं। यह अनाजों से बने आहार बच्चों के लिए काफी भारी होते हैं, इसके कारण एक समय में बच्चा थोड़ी सी मात्रा में ही भोजन खा पाता है। आदर्श स्थितियों में बच्चों को पोषक तत्वों की दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए थोड़े-थोड़े अन्तराल के बाद दिन में 5-6 बार आहार दिया जाता है और आहार की मात्रा भी कम होती है। तथापि पराम्परागत रुप से एक भारतीय बच्चे को दिन में दो से तीन बार ही आहार दिया जाता है और आहार की मात्रा भी कम होती है। इस कारण बच्चे को पर्याप्त आहार नहीं मिल पाता है, जो कि प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण का मुख्य कारण है।

परिवार नियोजन: परिवार नियोजन की कमी भी पोषण को प्रभावित करती है। अनचाहे गर्भ से निजात पाने के लिए बार-बार गर्भपात करवाने से भी स्त्री को एनीमिया व कुपोषण हो सकता है। हमारे देश की अधिकांश महिलाओं में अगले बच्चे के जन्म के समय बड़ा बच्चा मात्र एक वर्ष का ही होता है। इस प्रकार दो बच्चों के जन्म के बीच अन्तराल बहुत कम होता है। जन्म के बीच अन्तर कम होना माँ व बच्चे के लिए हानिकारक होता है। जल्दी-जल्दी जन्म होने के कारण माँ को पिछले प्रसव के शारीरिक तनाव से संभलने का समय ही नहीं मिल पाता। दो बच्चों के जन्म के बीच कम से कम 3 वर्ष का अन्तर होना चाहिए। केवल तभी माँ का पोषण सम्बन्धी स्तर अच्छा बन रह सकता है। जल्दी-जल्दी, कम अन्तराल में जन्म लेने वाले बच्चे को कुपोषण के गम्भीर रुप जैसे क्वाशियोरकर या मरास्मस होने का खतरा होता है।

निर्धनता (Poverty): भारत में कुपोषण, पोषण सम्बन्धी विसंगतियॉ व संक्रमण आदि अधिकतर भूमिहीन खेतीहर मजदूर के परिवारों, बिना कोई नियमित आय के स्रोत वाली जनजातियों, पिछड़ी हुई जातियों जैसे कबीलों, शहर की गन्दी बस्तियों आदि में रहने वाले बच्चों में पाया जाता है। इसका मुख्य कारण निर्धनता तथा परिवार का आकार में बड़ा होना है।

शैक्षिक स्तर (Educational Status): शिक्षा हमें मानसिक रुप से स्वस्थ्य बनाती है। दुर्भाग्य से हमारे देश में अशिक्षा काफी मात्रा में व्याप्त है। निम्न शैक्षिक स्तर के कारण व्यक्ति एक

स्वस्थ्य व सुरक्षित पोषण पाने में असमर्थ होता है। खराब, दूषित या हानिकार भोजन का सेवन करना, विभिन्न बीमारियों की गम्भीरता को न समझना, स्वास्थ्य के लिए हानिकारक भोजन सम्बन्धी आदतों का विकास आदि ऐसी कई स्थितियाँ है जो शिक्षा की कमी के कारण होती है। अशिक्षित व्यक्ति अस्पतालों, उचित डॉक्टरी इलाज, सरकारी योजनाओं आदि के बारे में भी नकारात्मक सोच रखते है और अक्सर ही गम्भीर समस्याओं से पीड़ित हो जाते हैं।

4.4.6 अस्वच्छता तथा अज्ञानता (Lack of hygiene and unawaraness)

सामुदायिक पोषण को प्रभावित करने वाले मूल कारण समुदाय के जीवन के विभिन्न पहलुओं में निहित होते हैं। बहुत से क्षेत्रों में व्यक्तिगत स्वच्छता की महत्ता के बारे में जानकारी की बेहद कमी है। पर्यावरणीय स्वच्छता ग्रामीण क्षेत्रों और शहरी स्लमों मे विशेष रुप से काफी खराब है। अधिकांश स्थानों पर मानव और पशु अपशिष्ट, वाहित-मल, कूड़ा-करकट इत्यादि के निपटान की समुचित व्यवस्था नहीं है। इससे अनेकों बीमारियाँ फैलती हैं। ये बीमारियाँ पूरे क्षेत्र को अपनी चपेट में ले लेती हैं और पोषण स्तर पर विपरीत प्रभाव डालती हैं।

कुपोषण का एक कारण अज्ञानता भी है। उचित पोषण प्रणाली का ज्ञान न होना भी स्वास्थ्य को नुकसान पहुँचाता है। ठीक प्रकार से पूरक आहार न देना, बच्चों की उचित देखभाल न होना जैसे गन्दी बोतल से दूध पिलाना आदि बच्चों को बीमार बना सकते हैं। अज्ञानता अस्वच्छता को बढ़ावा देती है, जिससे रोग स्थितियाँ व संक्रमण जैसे अतिसार, हैजा आदि फैलकर सामुदायिक स्वास्थ्य को खराब कर देते हैं।

4.4.7 टीकाकरण व संक्रमण (Vaccination & Infections)

प्रत्येक स्वास्थ्य केन्द्र पर अनेक बीमारियाँ जैसे डिफ्थीरिया (diptheria), काली खाँसी (whooping cough), टिटनेस (Tetanus), तपेदिक (tuberculosis), पोलियो (polio), खसरा (measels) आदि से बचने के लिए टीके लगाये जाते हैं। ये टीके सभी बच्चों को उचित सयम पर लगवाने चाहिए क्योंकि अगर उपरोक्त बताए गए किसी भी रोग से बच्चा ग्रस्त हो जाए तो जीवन पर्यन्त उसका बुरा परिणाम भुगतना पड़ता है। यह किसी भी रुप में हो सकता है जैसे शारीरिक व मानसिक विकलांगता, गम्भीर बीमारी, बौनापन व मृत्यु। एक बार बीमारी हो जाने पर भरपूर पोषण व प्रयास से भी उसके नकारात्मक प्रभावों से बचना मुश्किल हो जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों में टीकाकरण के प्रति लोगों की नीरसता निश्चित तौर पर बच्चों के स्वास्थ्य व पोषण स्तर को नुकसान पहुँचाती है।

टीकाकरण के विभिन्न प्रकार

अज्ञानता व अस्वच्छता से जो सबसे बड़ी समस्या जन्म लेती है वह है- संक्रमण। खाद्य सम्बन्धी गलत आदतें, अस्वच्छ पानी का सेवन, व्यक्तिगत व पर्यावरण अस्वच्छता के कारण संक्रमण हो जाते हैं। संक्रमण हमारे पोषण व स्वास्थ्य को निम्न प्रकार प्रभावित करते हैं-

भोजन के अंतग्रर्हण में कमी: दस्त या श्वसन संक्रमण से पीड़ित बच्चों में जो पहला परिवर्तन देखने को मिलता है, वह है भूख की कमी या भूख न लगना। अक्सर ऐसे बच्चों को खाना अच्छा नहीं लगता या फिर वह भोजन को पचा नहीं पाते है। इसी वजह से बच्चे के भोजन अंतग्रर्हण में कमी आ जाती है। साथ ही संक्रमण के उपचार के दौरान दिए जाने वाले प्रतिरक्षियों (antibiotics) के प्रयोग से भी बच्चे को भूख कम लगती है। कई बार यह भी देखने को मिलता है कि संक्रमण या किसी बीमारी से पीड़ित होने पर परिवार द्वारा बच्चे की खुराक में कमी कर दी जाती है या फिर खाना देना एकदम बन्द कर दिया जाता है। उदाहरण के तौर पर दस्त लगने पर ठोस खाद्य पदार्थ तथा दूध पर प्रतिबन्ध लगा दिया जाता है। ऐसे में पोषक तत्वों के अन्तग्रर्हण में और कमी आ जाती है जिससे पोषण स्तर निम्न हो जाता है।

पोषक तत्वों के अवशोषण पर प्रभाव: सभी पोषक तत्व पाचन के दौरान अवशोषित होकर रक्त में प्रवेश करते हैं। पोषक तत्वों के अवशोषण में कोई भी कमी किसी विशेष पोषक तत्व की कमी को उत्पन्न कर सकती है। यह देखा गया है कि दस्त, खसरा व श्वसन की बीमारियों जैसे संक्रमण के दौरान पोषक तत्वों के अवशोषण में कमी आ जाती है। अंतर्ग्रहित पोषक तत्वों का 60-70 प्रतिशत भाग ही हमारे शरीर को उपलब्ध हो पाता है। गोल कृमि जैसे कृमि ग्रसन भी पोषक तत्वों के अवशोषण को कम करते हैं जिसकी वजह से व्यक्ति अस्वस्थ हो जाता है।

प्रोटीन की क्षति/क्षय: कुछ संक्रमण व ज्वरों में कुछ पोषक तत्व, विशेष तौर पर प्रोटीन, शरीर से निष्कासित हो जाते हैं। इसी वजह से संक्रमण व ज्वर होने से प्रोटीन की आवश्यकता बढ़ जाती है।

भोजन अंतर्ग्रहण पर संक्रमणों का कुल प्रभाव महत्वपूर्ण होता है। एक गरीब ग्रामीण बच्चे पर जो कि पहले से ही अपर्याप्त भोजन पर पल रहा है, संक्रमण का प्रभाव विध्वंसकारी होगा।

इसलिए यह आश्चर्यजनक नहीं है कि हमारे देश में उन बच्चों में जिनका पोषण स्तर पहले है निम्न होता है उनमें दस्त, खसरा, काली खाँसी अक्सर क्वाशियोरकर और मरास्मस जैसे कुपोषण के गम्भीर रुप को उत्पन्न करते हैं।

4.4.8 स्थानीय रोग (Local diseases)

यद्यपि स्थानीय रोगों की व्यापकता प्रत्येक क्षेत्र में अलग-अलग है, तथापि हमारे देश में व्याप्त कुछ महत्वपूर्ण रोग क्षयरोग, मलेरिया, कोढ़ (leprosy), फाइलेरिया, आयोडीन की कमी से होने वाली विसंगतियाँ इत्यादि हैं। ये सभी रोग उस स्थान विशेष के सभी लोगों को बीमार व लाचार बनाकर स्वास्थ्य व पोषण की दृष्टि से कमजोर बनाते हैं। उचित जानकारी व बचाव द्वारा इनसे बचना व ग्रस्त होने पर समय से निवारण ही समुदाय को इनसे मुक्त कर सकता है।

अभ्यास प्रश्न 2

1. रिक्त स्थान भरिए।
   a. एक सामान्य बच्चे का जन्म भार ..... से ..... किलोग्राम होता है।
   b. कृमि ग्रसन व संक्रमण पोषण तत्वों के ..... को कम करते हैं।
   c. संक्रमण व ज्वर से ..... का क्षय होता है।
   d. पहाड़ी इलाकों की मिटटी में ..... की कमी देखा जाती है।
2. किन्हीं तीन बीमारियों के नाम बताइये जिन्हें टीकाकरण द्वारा रोका जा सकता है।

4.5 सांस्कृतिक कारक (Cultural factors)

सामाजिक रूप से संचरित व्यवहार को संस्कृति कहते हैं। भारत विभिन्न संस्कृतियों से सजा हुआ देश माना जाता है। यहाँ विभिन्न प्रकार की धर्म, जाति, नृत्य, संगीत, वास्तुकला व भोजन संस्कृतियों का डेरा है। संस्कृति से व्यक्ति की सोच, आचार-व्यवहार, विश्वास व गतिविधियों का पता चलता है। यद्यपि संस्कृति हमें बेहद कीमती शिष्टाचार आदि प्रदान करती है पर साथ ही कुछ ऐसे विश्वास, प्रचलन व प्रथायें भी देती है, जो कई बार हमारे लिए बहुत लाभदायक नहीं होते। ऐसे ही कुछ सांस्कृतिक कारकों के बारे में हम पढेंगे जो सामुदायिक पोषण को प्रभावित करते हैं। यह मुख्य रूप से स्त्री वर्ग को प्रभावित करते हैं-

4.5.1 रीति-रिवाज (Customs)

सभी संस्कृतियों में कई प्रकार के रीति-रिवाज माने जाते हैं। ये रीति-रिवाज समुदाय को किसी कार्य या गतिविधि को विशेष तरीके से करने को बाध्य करते हैं। भारतीय संस्कृति के कुछ रीति-रिवाज जो पोषण को प्रभावित करते हैं, इस प्रकार हैं-

i. भारत में लिंग भेद की वजह से बालिकाओं को काफी कम समय ही माँ का दूध दिया जाता है तथा उन्हें जल्दी से जल्दी पूरक आहार देने की कोशिश की जाती है। इससे वे कुपोषण से ग्रस्त हो जाती हैं।

ii. महिलाओं एवं बालिकाओं को भेदभाव की वजह से भोजन पदार्थ, विशेष रूप से गुणवत्ता वाले खाद्य जैसे घी, दूध, दही, फल आदि से वंचित रखा जाता है। बहुत बचपन से ही बालिकाओं को अपनी जरूरत से इनकार करना सिखाया जाता है।

iii. भारतीय परिवारों में पितृसतात्मकता के कारण महिलाओं को पति की सेवा को सर्वोच्च स्थान पर रखने की प्रेरणा दी जाती है। इसका एक नकारात्मक प्रभाव जब देखा जाता है तब स्त्री पूरे घर के भोजन करने के बाद बचे-खुचे खाने से पेट भरती है। ये अनेक प्रकार की पोषण सम्बन्धी विसंगतियों को जन्म देता है।

iv. भारतीय परिवेश में लड़कियाँ और महिलायें कई सामाजिक व धार्मिक कारणों से सप्ताह में कई दिन उपवास रखती है। यह उपवास अलग-अलग महत्व जैसे पति की दीर्घायु, पुत्र प्राप्ति, पारिवारिक समृद्धि आदि हेतु रखे जाते हैं। यद्यपि कुछ हद तक उपवास शरीर को स्वस्थ्य बनाते है, परन्तु अनेक उपवास वो भी अत्यधिक कठोर प्रकार के जैसे निर्जल व्रत आदि सेहत को नुकसान पहुँचाते हैं। जब अल्पपोषित व कुपोषित महिलायें इस तरह के उपवास करती हैं, तो स्थिति अत्यन्त गम्भीर हो जाती है। स्वास्थ्य जटिलताओं एवं शारीरिक असमर्थताओं में भी ईश्वरीय भय से उपवास किया जाता है। इस तरह महिलायें जल्दी ही अपनी उम्र से बडी दिखने लगती हैं व लम्बे समय तक इसी प्रकार शरीर पर तनाव देने से गठिया (arthrities) व ऑस्टियोपोरोसिस (Osteoporosis) आदि से ग्रस्त हो जाती हैं।

v. अनेक क्षेत्रों मुख्यतः गाँवों में महिलाओं को खाना पकाने के साथ-साथ अन्य कठोर कार्यों में भी शामिल किया जाता है जैसे खेती, मीलों दूर पानी भरने जाना आदि। इन सब कामों से घर बैठकर भी उसे संतुलित भोजन से वंचित रखा जाता है। इसके अनेक कारण हैं जैसे सबसे बाद में भोजन करने का प्रचलन, घर के बड़े-बुजुर्गों द्वारा लिंग भेद के कारण कम भोजन देना आदि।

vi. ग्रामीण अशिक्षित इलाकों में आज भी अस्पतालों में प्रसव को बुरा माना जाता है। प्रसव घर पर दाइयों (midwife) द्वारा करवाने से अनेक प्रकार के संक्रमण व स्वास्थ्य जटिलतायें स्त्री को कुपोषणग्रस्त बना देती हैं।

vii. कई जातियों में पुरूषों का तम्बाकू, धूम्रपान, हुक्का व मदिरापान प्रतिष्ठा का सूचक माना जाते हैं। यह प्रचलन पुरूषों की सेहत तथा आर्थिक स्थिति को नुकसान पहुँचाते हैं।

4.5.2 खाद्य मिथक (Food Fallicies)

खाद्य मिथक से तात्पर्य भोजन सम्बन्धित अंधविश्वासों व धार्मिक परम्पराओं से है, जो किसी खाद्य पदार्थ को भोजन में प्रतिबंधित करती हैं। इस प्रतिबंध का कारण महज मान्यता होती है।

इसके द्वारा व्यक्ति उस खाद्य पदार्थ द्वारा प्रदान किये जाने वाले पोषक तत्व से वंचित रह जाता है। ऐसे ही कुछ खाद्य मिथक की चर्चा इस प्रकार है:

- बहुत से लोग सभी भोज्य पदार्थ को गर्म व ठण्डे वर्गों में विभाजित करते हैं। पपीता, नारियल, मिर्च, कटहल, आलू, मेवे, मांस आदि गर्म माने जाते हैं तथा दूध, दही, सब्जियाँ इत्यादि ठण्डी मानी जाती हैं। अनेक शारीरिक स्थितियों एवं मौसमों में इन्हें नहीं खाया जाता। जैसे गर्मियां में गर्म भोज्य पदार्थों को कम लेना आदि। वास्तव में यह बिल्कुल गलत है।
- गर्भावस्था में गर्म भोज्य पदार्थ नहीं दिये जाते क्योंकि यह माना जाता है कि इनसे गर्भपात हो जाता है। इस मिथक द्वारा गर्भवती स्त्री अनेक पोषक तत्वों से वंचित रह जाती है।
- कई इलाकों में यह मान्यता है कि गर्भवती स्त्री के अधिक भोजन करने से होने वाले बच्चे का आकार भी बड़ा हो जाएगा, जिससे प्रसव में परेशानी होगी। अतः गर्भवती स्त्री को कम भोजन लेने पर मजबूर किया जाता है। फलस्वरूप मातृक कुपोषण के साथ-साथ बच्चे का जन्म भार भी अत्यन्त कम होता है। इससे कई मामलों में मातृ एवं शिशु मृत्यु भी देखी गई है।
- कई गर्भवती महिलायें ये मानती हैं कि मछली व दूध को साथ-साथ लेने से उनका गर्भस्थ शिशु अपंग हो जाएगा ।
- कुछ क्षेत्रों की मान्यता के अनुसार लौह-लवण की गोलियों से शिशु का रंग काला होता है। फलस्वरूप गर्भवती स्त्रियों में एनीमिया की समस्या और गम्भीर रूप धारण कर लेती है, जिससे मातृ मृत्यु की आशंका बढ़ जाती है।
- कुछ बुजुर्ग महिलायें ये मानती हैं कि पपीता तथा आम से गर्भपात हो जाता है। वास्तव में गर्भवती स्त्री को इन फलों से विटामिन 'ए' की प्राप्ति होती है।
- कई परिवारों में गर्भवती स्त्री तथा हर प्रकार के बीमार व्यक्ति को घी अत्यधिक मात्रा में दिया जाता है। उनका मानना है कि इससे ताकत मिलती है। वास्तव में घी ऊर्जा तो प्रदान करता है, परन्तु अत्यधिक सेवन से शरीर में कॉलेस्ट्राल की मात्रा बढ़ने से हदय रोग की सम्भावना भी बढ़ जाती है। इसके अलावा बहुत से रोग जैसे यकृत रोग आदि में घी का सेवन रोग को और गम्भीर बना देता है।
- कुछ जगह प्रसवोपरान्त 40 दिन तक महिला को सिर्फ उबला खाना दिया जाता है। ऐसा करने से धात्री माता की पोषणीय आवश्यकतायें पूरी नहीं हो पाती फलतः वह कुपोषित हो जाती है।
- कुछ मान्यताओं के अनुसार खट्टे फल व दूध को साथ लेने से दूध पेट में जाकर फट जाता है। अतः ऐसा नहीं करना चाहिए। परन्तु वास्तव में फल व दूध साथ लेने से किसी भी प्रकार की स्वास्थ्य हानि नहीं होती।

- यह भी कहा जाता है कि सर्दियों में खट्टे फल खाने से ठण्ड लग जाती है व गला भी खराब हो जाता है। परन्तु यह सच नहीं है, वास्तव में सभी खट्टे फल विटामिन 'सी' के मुख्य स्त्रोत है और विटामिन 'सी' हमारी रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है।
- प्रसव के बाद स्त्री को अपना प्रथम दूध शिशु को नहीं दिया जाता है क्योंकि यह देखने में गाढ़ा, पीला व चिपचिपा होने की वजह से खराब माना जाता है। पर सच तो यह है कि यह शिशु को रोग प्रतिरोधक क्षमता प्रदान करने के साथ-साथ अत्यधिक पौष्टिक भी होता है। इसे नवदुग्ध या कॉलेस्ट्रम (cholestrum) कहते हैं।

रूढ़ीवादिता एवं धार्मिक दवाब के कारण हमारे समाज में कुछ ऐसी मान्यताएं एवं प्रचलन आज भी माने जाते हैं, जो सामुदायिक पोषण पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं। इसका मुख्य प्रभाव महिलाओं एवं बालिकाओं में कुपोषण व संक्रमण के रूप में देखने को मिलता है। यह कुरीतियाँ पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तानान्तरित की जाती हैं व इसका पालन न करना धार्मिक भावनाओं को ठोस पहुँचाना माना जाता है। हालांकि शिक्षा का स्तर बढने से जागरूकता कुछ हद तक बढ़ी है, परन्तु हमें एक अच्छे नागरिक की तरह इन मान्यताओं का त्याग करना चाहिए, जिससे एक स्वस्थ व सफल परिवार का निर्माण हो सके। अतः इन अनेक प्रकार के मिथकों एव अंधविश्वासों से व्यक्ति विशेष का स्वास्थ्य तो खराब होता ही है साथ ही अक्सर कुछ ऐसी जटिलताएं भी हो जाती हैं, जो जीवनपर्यन्त परेशान करती हैं जैसे गर्भावस्था के दौरान कई खाद्यों को प्रतिबन्धित करने से शिशु का गर्भ में विकास सही प्रकार से नहीं हो पाता और वह जन्म से पहले ही किसी मानसिक व शारीरिक कमी से ग्रस्त हो जाता है।

अभ्यास प्रश्न 3

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।
   a. प्रसवोपरान्त माँ का प्रथम दूध शिशु को ..... क्षमता प्रदान करता है।
   b. मान्यताओं के अनुसार खट्टे फल व दूध साथ में लेने से दूध पेट में ..... जाता है।
   c. यह माना जाता है कि गर्भावस्था में आम व पपीता खाने से ..... हो जाता है।
   d. कुछ लोगों के अनुसार लौह-लवण की गोलियाँ लेने से शिशु का रंग ..... हो जाता है।

4.6 सारांश

भारत वर्ष यद्यपि बहुत तेजी से प्रगति कर रहा है, परन्तु कुछ ऐसे कारक हैं जो कि व्यक्तिगत हैं या अज्ञानता व गरीबी जनित है अथवा हमारी मान्यताओं की देन हैं। ये सभी कारक कहीं न

कहीं अनेक प्रयासों के बावजूद भी हमारे देश के पोषण को नुकसान पहुँचा रहे हैं। सरकार सामुदायिक पोषण को सुधारने के लिए अनेकों कार्यक्रमों का क्रियान्वन कर रही है, परन्तु इस इकाई में बताये विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों का अंत सिर्फ शिक्षण, जागरुकता एवं नेतृत्व द्वारा ही सम्भव है। प्रत्येक व्यक्ति को इस कार्य हेतु कदम बढ़ाना चाहिए ताकि एक स्वस्थ्य समुदाय का निर्माण हो सके।

4.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1. अ- (iii)
   ब- (iv)
   स- (ii)
   द- (i)
2. रिक्त स्थान भरिए।
   a. 7
   b. अंतग्रहण, व्यय
   c. रेशा
   d. आनुवांशिकता

अभ्यास प्रश्न 2

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।
   a. 2.3 से 3
   b. अवशोषण
   c. प्रोटीन
   d. आयोडीन
2. काली खाँसी, खसरा, पोलियो।

अभ्यास प्रश्न 3

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।
   a. रोग प्रतिरोधक
   b. फट
   c. गर्भपात
   d. काला

4.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

इंटर्नेट स्रोत

1. www.novartisfoundatation.org
2. www.stanford.edu
3. www.women-health.com
4. www.womenshealthabout.com
5. www.health.vic.gov.auèhealth promotion
6. www.athenaglobal.com
7. www.ehow.comèculture & society
8. www.ncbi.nlm.nih.gov
9. www.faculty.ksu.edu.sa
10. www.slideshare.net
11. www.journals.cambridge.org
12. www.journal.org
13. www.ohchr.org
14. www.wikipedia.org
15. www.google.com